374

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

कब्ज एवं बवासीर

जड़ी-बूटी चिकित्सा

वैद्य भगवान दास

बी. जैन पब्लिशर्स (प्रा.) लि.

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

कब्ज एवं बवासीर
की
जड़ी-बूटी-चिकित्सा

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

वनौषधि-चिकित्सा-ग्रन्थमाला: संख्या 5

कब्ज एवं बवासीर की जड़ी-बूटी-चिकित्सा

लेखक
वैद्य भगवान दाश
(डी.ए.एम.एस., एच.पी.ए., एम.ए., पी.एच.डी.)

अनुवादिका
कुमारी कञ्चन गुप्ता
(एम.ए., एम.एड.)

बी. जैन पब्लिशर्स (प्रा.)
नई दिल्ली-110055

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

मुख पृष्ठ चित्र: यह पलाश (Butea monosperma) की एक पुष्पित शाखा का चित्र है। यह आंतों के कीड़ों के उपचार के लिए एक चुनी हुई औषधि है। यहाँ तक कि जीव-जन्तु भी इस रोग से पीड़ित होने पर, स्वाभाविक रूप से इन पुष्पों का सेवन करते हैं। इस चित्र में भी एक आकर्षक गिलहरी उत्सुक दृष्टि से इस पुष्पौषधि का आनन्द लेते हुए दिखाई दे रही है।

संस्करण 1995

© वी. जैन पब्लिशर्स, 1988

प्रकाशक

वी. जैन पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड
1921, चूना मंडी, गली नं. 10
पहाड़ गंज, नई दिल्ली-110055

मूल्य: 15/-

मुद्रक:
जे.जे. ऑफसेट प्रिन्टर्स

BOOK CODE B-3134

सर्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशक की अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भी अंश की पुर्नरचना एवं संशोधन अथवा इलेक्ट्रोनिक, यान्त्रिक (mechanical), फोटोग्राफी, रिकार्डिंग एवं अन्य किसी भी साधन द्वारा इसका किसी भी रूप में हस्तान्तरण या संरक्षण नहीं किया जा सकता।

Mahavidyalaya Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

प्रकाशकीय
एक परिचय 1

भाग—I : रोग 7-33

कब्ज क्या है? 7
वृहदान्त्र 7
मल विसर्जन की प्रक्रिया 8
कब्ज का परिणाम 8
पुरीष अथवा मल 9
पुरीष में जीवाणु 10
आंत्रवायु 10
बवासीर अथवा अर्श 11
कब्ज के कारण 12
बवासीर अथवा अर्श के कारण 13
कब्ज एवं बवासीर 14
कब्ज के प्रमुख लक्षण 14
बवासीर के लक्षण 16
आयुर्वेद के अनुसार बवासीर 16
शिशुओं में कब्ज 17
गर्भवती महिलाओं में कब्ज 18
उपचार 19
बवासीर में शल्य चिकित्सा 19
एनिमा का नियमित प्रयोग 19
रेचक औषधियों का नियमित प्रयोग 20
भोजन 22

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

चिकने पदार्थ (Fats) 25
दालें 25
मांस और मछली 26
चाय और कॉफी 26
मादक द्रव 27
तम्बाकू 27
तला हुआ भोजन 27
रात्रि को दूध का प्रयोग 28
प्रातः काल पानी पीना 28
मट्ठा अथवा दही की लस्सी 29
उपयोगी मसाले 30
व्यायाम 31
नींद एवं आराम 31
मानसिक शान्ति 32
पूर्वदेशीय शौचालय 32
औषधियां 33

भाग-II- जड़ी बूटियों से उपचार

अमलतास (Cassia Fistula) 37
अंगूर एवं मुनक्का (Vitis Vinifera) 42
ईसबगोल (Plantago Ovata) 47
एरण्ड (Ricinus Communis) 58
ग्वारपाठा (Alse Barbadensis) 64
जमीकन्द (Amorphophallus Campanulatus) 68
पपीता (Carica Papaya) 73
बिल्व (Aegle marmelos) 76
मुलहटी (Glycyrrhiza Glabra) 80
सनाय (Cassia Angustifolia) 84
हरड़ (Terminalia Chebula) 88

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

प्रकाशकीय

डॉ. भगवान दाश के सम्पर्क में आने पर मेरे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि 'सामान्य रोगों की जड़ी-बूटियों के आधार पर चिकित्सा सम्बन्धी' सरल पुस्तकों की एक श्रृंखला निकाली जाए। इससे पूर्व भी मैं डॉ. दाश की कुछ अन्य पुस्तकों का प्रकाशन कर चुका हूं। हमने यह अनुभव किया कि ये जड़ी-बूटियाँ अपेक्षाकृत अधिक श्रेष्ठ व गुणकारी हैं। इसके साथ-साथ जनता में अधिक लोकप्रिय भी हैं। हमारी भावना है कि व्यक्ति रोगों की चिकित्सा में ही अपने जीवन का अमूल्य समय बरबाद करने की बजाय प्रकृति के सन्निकट रहना सीखें तथा स्वस्थ एवं सामान्य जीवन जी सकें। वस्तुतः चिकित्सा का उद्देश्य रोगों की रोकथाम करना मात्र न होकर अच्छे स्वास्थ्य को निरन्तर बनाये रखना होना चाहिए।

हमारा यह प्रयास व्यावसायिक एवं आर्थिक उद्देश्य से प्रेरित नहीं है। यह एक ऐसा विशुद्ध प्रयास है, जिसके माध्यम से इन उल्लेखनीय व महत्त्वपूर्ण औषधियों की जानकारी सर्वत्र व जनसामान्य तक पहुंच सके।

मैंने अपने विचार डॉ. दाश के समक्ष रखे। वे इस प्रकार की बीस सरल पुस्तकों की श्रृंखला तैयार करने के लिए सहमत हो गये, जिनमें सामान्य रोगों की जानकारी तो हो ही। इसके साथ-साथ उन सुविधापूर्वक प्राप्त होने वाली एवं प्रभावशाली जड़ी-बूटियों का वर्णन भी किया जाये। इसके अतिरिक्त इनमें तत्तत् रोग सम्बन्धी पथ्यापथ्य तथा आहार-विहार का उल्लेख भी किया गया है। यह कार्य डा. दाश के पिछले तीस वर्षों के आयुर्वेद व अन्य पारम्परिक चिकित्सा-पद्धतियों से सम्बद्ध अनेक प्रकार के अनुसंधानों, गहन अध्ययन तथा चिकित्सीय अनुभवों का मन्थित सार है। हमारी इस उपलब्धि के

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh
वास्तविक निर्णायक तो हमारे पाठकगण ही होंगे। इस सन्दर्भ में, हम महाकवि कालिदास का निम्न श्लोकांश उद्धरण रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं—

"आपरितोषाद् विदुषां न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम्।"

अर्थात् हम अपने इस प्रयास को तब तक सफल नहीं मानेंगे, जब तक हमारे बुद्धिमान् पाठक, जिन्हें लक्ष्य में रखकर यह कार्य सम्पन्न किया गया है, सन्तुष्ट न हों।

—प्रेमनाथ जैन

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

कब्ज एवं बवासीर

एक परिचय

कब्ज अनेक प्रकार के शारीरिक एवं मानसिक रोगों की जड़ है, परन्तु अब यह एक सामान्य समस्या बन गई है। सभ्य एवं विकसित माने जाने वाले देशों में तो यह समस्या इतनी अधिक फैल चुकी है कि एक औषधीय इतिहासवेत्ता वर्तमान समय को कब्ज का युग' नाम दे सकता है। इन विकसित देशों के साथ-साथ अविकसित एवं विकासशील देशों में भी कब्ज की शिकायत बहुत तीव्रता से बढ़ रही है। छिलके व रेशों (fibers) आदि के बिना तैयार किया गया अप्राकृतिक भोजन ग्रहण करना, मल, मूत्र, छींक, जम्भाई आदि स्वाभाविक आवेगों की पूर्ति करने में लापरवाही बरतना, शरीर के लिए आवश्यक आराम में कमी, मानसिक तनाव आदि— ये कुछ ऐसी आदतें हैं, जो कब्ज की समस्या को उत्पन्न करने एवं बढ़ाने में विशेष रूप से सहायक हैं। परन्तु समय एवं सभ्यता के विकास के साथ-साथ ये सब आदतें आधुनिक समाज का अभिन्न अंग बनती जा रही हैं। परिणामत: कब्ज भी सामान्य समस्या बनती जा रही है। दुर्भाग्यवश, आधुनिक चिकित्सा-वैज्ञानिक भी इस समस्या को अधिक महत्त्व नहीं दे रहे हैं। उनके अनुसार कब्ज केवलमात्र बड़ी आंत (colon) से सम्बन्धित रोग है, अत: यह एक स्थानीय समस्या है। यही कारण है कि वे इस रोग से शरीर के अन्य अंगों पर होने वाले दुष्परिणामों को भी नज़र-अन्दाज़ कर रहे हैं और इसे एक साधारण रोग ही मानते हैं। इसी तरह बवासीर (piles) मुख्यत: पुरानी कब्ज से उत्पन्न एक रोग है तथा सारे शरीर से सम्बन्धित है। परन्तु आधुनिक चिकित्सक इसे भी भ्रान्तिवश केवल गुदा (anus) की भित्तियों (walls) से सम्बन्धित स्थानीय रोग ही मानते हैं। यही कारण है कि आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान की पुस्तकों में बवासीर (piles) का उल्लेख बिल्कुल नहीं मिलता। इसका वर्णन केवल शल्य (surgery) की पुस्तकों में ही किया गया है।

प्रतिदिन नियमपूर्वक पुरीष त्याग को स्वास्थ्य के लिए आवश्यक क्रिया माना गया है। परन्तु, कुछ लोग भ्रान्तिवश इस धारणा को भी सही नहीं मानते हैं। ऐसे लोग नियमित रूप से मलत्याग की क्रिया के प्रति लापरवाह भी रहते हैं। और कुछ अन्य

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

लोग दूसरे कार्यों में व्यस्त रहने के कारण भी इस स्वाभाविक आवेग की पूर्ति नहीं कर पाते। दूसरी ओर, कब्ज के कारण व्यक्ति को जो असुविधा अथवा कष्ट होता है, उसकी भी वे उपेक्षा कर देते हैं। इस प्रकार के कष्ट को एक प्रकार का काल्पनिक माना जाता है। इसे दूर करने के लिए, लोग प्रायः अलग-अलग तरह की विरेचक औषधियां (purgatives) या एनिमा (enema) लेते रहते हैं। और धीरे-धीरे वे इन औषधियों एवं एनिमा आदि लेने के इतने अधिक अभ्यस्त हो जाते हैं कि उन्हें अपनी शेष ज़िन्दगी इन्हीं औषधियों के सहारे वितानी पड़ती है। यही कारण है कि आजकल कैमिस्ट अन्य दवाओं की अपेक्षा रेचक (purgatives) अथवा पेट साफ करने वाली औषधियां ही अधिक बेचते हैं।

आयुर्वेद के अनुसार, मल, मूत्र, छींक, जम्भाई आदि स्वाभाविक आवश्यकताओं की पूर्ति न करने से एवं इनको दबाकर रखने से शरीर में अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं। इसका विस्तृत वर्णन हमें आयुर्वेद के ग्रन्थों में मिलता है। इन वेगों के रोकने को आयुर्वेद में 'वेगरोध' के नाम से जाना गया है। स्वाभाविक वेगों में मलत्याग की आवश्यकता को सर्वप्रथम माना गया है। मलत्याग की क्रिया का नियन्त्रण नाड़ियों (nerves) का एक समूह करता है और इन नाड़ियों की क्रिया का नियन्त्रण अपान वायु करता है। जब कोई व्यक्ति मलत्याग की आवश्यकता की अनुभूति होने पर भी मलत्याग नहीं करता, तो इस स्थान की नाड़ियों में विकार उत्पन्न होने लगते हैं। और धीरे-धीरे सम्पूर्ण नाड़ी-संस्थान (nervous system) पर ही इसका कुप्रभाव पड़ने लगता है। परिणामस्वरूप, शरीर के दूसरे अंगों में भी अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। परन्तु आधुनिक चिकित्सा-पद्धति, अभी तक कब्ज एवं शरीर के दूसरे अंगों में होने वाले रोगों के बीच सीधा सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाई है।

आयुर्वेद में सभी प्रकार के रोगों को दो श्रेणियों में बांटा गया है—1) वे रोग, जिनकी उत्पत्ति आमाशय एवं छोटी आंत से होती है। ये 'आमाशयोद्‌भव रोग' कहलाते हैं, तथा 2) वे रोग, जिनकी उत्पत्ति बड़ी आंत से होती है, ये 'पक्वाशयोद्‌भव रोग' कहलाते हैं। इनमें दूसरी श्रेणी के रोग संख्या में अधिक तथा अपेक्षाकृत अधिक कष्टदायक एवं गम्भीर होते हैं। इनमें अधिकांश रोगों का मूल कारण कब्ज ही है।

कुछ लोग तो जान-बूझकर पुरीषत्याग की आवश्यकता को दबाकर रखते हैं (जैसा कि पहले बताया गया है), परन्तु कभी-कभी अनुचित आहार-विहार एवं कुछ

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

मानसिक परेशानियों के कारण भी पुरीषत्याग की क्रिया भली प्रकार नहीं हो पाती। जिस किसी भी कारण से हो, चाहे जान-बूझकर लापरवाही बरतने से अथवा अनुचित आहार-विहार से— इसका परिणाम तो कब्ज ही है अर्थात् पर्याप्त मात्रा में पुरीष अथवा मल (feces) का बाहर न निकलना। इस पुरीष अथवा मल में, भोजन की पाचन-क्रिया के दौरान बचे हुए अनावश्यक तत्व (waste products) तो होते ही हैं, इसके साथ-साथ इसमें अनेक प्रकार के जीवाणु (bacteria) एवं धात्वग्निपाक क्रिया (metabolic process) के दौरान उत्पन्न हुए रक्त सम्बन्धी कुछ अवांछनीय पदार्थ भी होते हैं। जब मल का विसर्जन ठीक प्रकार से होता रहता है, तो ये सब हानिकारक पदार्थ भी शरीर से बाहर निकल जाते हैं। परन्तु कब्ज होने पर अथवा पुरीष के पर्याप्त मात्रा में बाहर न आने पर, ये उपरोक्त हानिकारक पदार्थ शरीर में गड़बड़ पैदा करने लगते हैं। परिणामस्वरूप, पाचन एवं धात्वग्निपाक— ये दोनों ही प्रक्रियाएं बुरी तरह प्रभावित होती हैं तथा यकृत् (liver), पैन्क्रियास (pancreas) आदि अंगों पर भी इसका दुष्प्रभाव पड़ता है।

पुरीष (stool) में पाये जाने वाले कुछ जीवाणु (bacteria) विषैले भी होते हैं। कब्ज होने पर ये विषैले जीवाणु शरीर में ही रहते हैं तथा रक्त के प्रवाह (blood stream) में मिल जाते हैं, और फिर शरीर में अन्तर्विषाक्तता (autotoxication) उत्पन्न करने लगते हैं।

हमारी बृहदान्त्र (colon) में कुछ जीवाणु शरीर के लिए लाभदायक भी होते हैं। ये जीवाणु अन्य तत्वों के साथ मिलकर कुछ महत्वपूर्ण विटामिनों का निर्माण करते हैं। ये विटामिन शरीर में होने वाली धात्वग्निपाक क्रिया (metabolic process) को सुचारु रूप से चलाने में सहायक होते हैं। परन्तु जब कब्ज के कारण हानिकारक जीवाणु भी शरीर में उपस्थित रहते हैं, तो इनकी विटामिन बनाने की क्रिया रुक जाती है और अन्ततः ये लाभकारी जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार, शरीर में बहुत से उपयोगी विटामिनों की कमी हो जाती है। इसलिए, कब्ज से पीड़ित व्यक्ति को इन प्राकृतिक विटामिनों की कमी के कारण बहुत से कृत्रिम विटामिन लेने पड़ते हैं और उन्हीं पर निर्भर रहना होता है। यही कारण है कि उन्नत देशों में, सभ्य कहलाये जाने वाले समाज में इस प्रकार के विटामिनों और इनसे तैयार की गई अन्य औषधियों, जैसे विरेचक औषधियों (purgatives) का प्रयोग निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

सामान्यत: बृहदान्त्र(colon) में जीवाणु एक सन्तुलित मात्रा में ही विटामिनों का निर्माण करते हैं। परन्तु इन प्राकृतिक विटामिनों के अभाव में, रोगी को जिन कृत्रिम विटामिनों के ऊपर निर्भर रहना पड़ता है, उनमें शरीर के अनुरूप सभी प्रकार के गुण भी नहीं पाये जाते और न ही वे उचित मात्रा में लिये जाते हैं। इससे अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न होने लगते हैं। इस प्रकार के रोगी के शरीर में, कभी तो विटामिनों की मात्रा आवश्यकता से बहुत अधिक हो जाती है और कभी आवश्यकता से भी कम।

इसके साथ ही यह भी अनुभव किया गया है कि विरेचक द्रव्यों एवं रासायनिक पदार्थों के प्रयोग से रोगी को तुरन्त आराम तो मिल जाता है, परन्तु ये पदार्थ फिर कब्ज पैदा कर देते हैं। जब तक रोगी अपने खान-पान एवं अन्य आदतों में सुधार नहीं करता, उसे इन्हीं औषधियों एवं एनिमा(enema) आदि पर ही निर्भर रहना पड़ता है। और इन पदार्थों एवं साधनों के नियमित प्रयोग से अनेक प्रकार के उपद्रव खड़े हो जाते हैं तथा बृहदान्त्र (colon) अपना सामान्य कार्य करना भी छोड़ देती है।

तो फिर इस कब्ज रूप समस्या का समाधान क्या है?

इस समस्या को सुलझाने के लिए सर्वप्रथम आवश्यक है कि रोगी अपनी खान-पान की आदतों को सुधारे, मलत्याग की नियमित आदत बनाए तथा मानसिक दबाव से बचा रहे। परन्तु आजकल के विकसित एवं सभ्य माने जाने वाले युग में, खान-पान की आदतों को पूरी तरह बदलना भी बहुत कठिन है। और खान-पान में छोटा-मोटा परिवर्तन करने से तो कब्ज की समस्या से पूरी तरह छुटकारा नहीं पाया जा सकता। इसलिए इससे छुटकारा पाने के लिए कुछ औषधियों का सेवन करना आवश्यक हो जाता है। परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि ये औषधियां, साधारण तथा खाद्य-पदार्थ एवं सब्जी-फल आदि के रूप में हों तथा ये किसी प्रकार का नुकसान पहुंचाने वाली न हों। इनसे शरीर के विभिन्न अंगों विशेषकर जठरान्त्रप्रणाली(gastro-intestinal tract) पर किसी तरह का बुरा प्रभाव नहीं पडना चाहिए। इन पदार्थों में इस तरह के गुण होने चाहिए, जो एक सामान्य व्यक्ति को कब्ज से तो बचाये रखें और कब्ज से पीड़ित व्यक्ति की कब्ज को दूर कर दें। इसके साथ ही यह भी देखना चाहिए कि ये औषधियां ऐसी न हों कि जिनके सेवन करते रहने से तो मलत्याग की क्रिया ठीक प्रकार चलती रहे और यदि इन्हें छोड़ दिया जाए तो फिर कब्ज हो जाए। अत: यह आवश्यक है कि ये औषधियां यकृत्(liver) की क्रिया ठीक प्रकार से चलायें और मनुष्य को अर्श अथवा बवासीर (piles) से भी पूरी तरह बचाये रखें।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

आधुनिक युग में तो चिकित्सा-विज्ञान ने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति कर ली है। जहां पहले यह माना जाता रहा है कि मनुष्य अनेक प्रकार के रासायनिक एवं भौतिक पदार्थों का सम्मिश्रण मात्र है, वहां विशेषज्ञता (specialisation) के इस युग में यह धारणा भी बदल चुकी है। इस नवीन विचारधारा के अनुसार एक सम्पूर्ण मानव-प्राणी में रासायनिक एवं भौतिक पदार्थों के अतिरिक्त उसके स्वयं के शारीरिक, संवेदनिक एवं आध्यात्मिक तत्त्व भी सम्मिलित हैं। धीरे-धीरे यह विश्वास भी बढ़ता जा रहा है कि मनुष्य इस जैव-वैज्ञानिक (biological) एवं लौकिक (cosmic) ब्रह्माण्ड का महत्त्वपूर्ण अंग है। प्रकृति के इन स्थिर एवं अखण्डनीय नियमों में भी उसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस बदली हुई विचारधारा के साथ इस बात का महत्त्व भी अधिक बढ़ गया है कि उसका खान-पान, आचार-विचार एवं मानसिक क्रियाएं इस प्रकार की हों, जो उसे बीमारियों से बचाये रखें तथा बीमारी को दूर करने में औषधि के रूप में कार्य करें। आधुनिक प्रचलित चिकित्सा-पद्धति में, यद्यपि इन सब बातों पर बल दिया जा रहा है, परन्तु फिर भी यह चिकित्सा-पद्धति अभी तक मनुष्य की कब्ज एवं बवासीर जैसी समस्याओं को भी नहीं सुलझा पाई है।

इसके विपरीत, आयुर्वेद में कब्ज एवं बवासीर जैसे रोगों के कारणों, लक्षणों एवं चिकित्सा का विस्तृत वर्णन मिलता है। इसके साथ ही साथ यह भी बताया गया है कि किस प्रकार की सावधानियों से मनुष्य इन रोगों से बचा रह सकता है। परन्तु आधुनिक चिकित्सक एवं बुद्धिजीवी वर्ग दुर्भाग्यवश, आयुर्वेद एवं इसी प्रकार की अन्य पारम्परिक चिकित्सा-प्रणाली में बताई गई सावधानियों, निर्देशों (prescriptions) एवं परहेजों (prohibitions) के महत्त्व को नहीं समझ पा रहे। यही कारण है कि सभ्यता के विकास के साथ-साथ कब्ज एवं बवासीर जैसी शिकायतें भी बढ़ती जा रही हैं। इसी का परिणाम है कि मनुष्य अनेक प्रकार के रोगों का घर बन गया है तथा वह समय से पहले ही बुढ़ापे एवं मृत्यु का शिकार हो जाता है।

जहां आधुनिक चिकित्सा-पद्धति में इस समस्या को कुछ विशेष महत्त्व नहीं दिया जा रहा, वहां प्राचीन सभ्यता में पले देशों एवं पारम्परिक चिकित्सा-प्रणाली में कब्ज एवं बवासीर से होने वाले कुप्रभावों को लोग अच्छी तरह समझते थे। इसीलिए उसे इस प्रकार के खान-पान एवं आदतों को अपनाने की सलाह दी जाती थी, जो उसे इन रोगों से बचाये रखें तथा जो लोग इन रोगों से पीड़ित हैं, वे इन साधारण खाद्य-पदार्थों एवं नियमों

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

को अपनाने से ही रोगमुक्त हो जायें। इन साधारण खाद्य-पदार्थों एवं औषधियों का प्रयोग हज़ारों सालों से होता चला आ रहा है। इनका प्रयोग भारत के अतिरिक्त, नेपाल, श्रीलंका, बर्मा, चीन, बांग्लादेश, पाकिस्तान, मंगोलिया, कोरिया एवं रूस के बहुत से स्थानों के योग्य चिकित्सक अपनी पारम्परिक चिकित्सा-प्रणाली में करते चले आ रहे हैं।

इन औषधियों का प्रयोग केवलमात्र अनुभव के आधार पर नहीं, अपितु युक्तिपूर्वक एवं अनेक प्रकार की खोजों के आधार पर किया जाता है। भारत एवं उसके पड़ोसी देशों में, इस प्रकार की अनुभूत एवं प्रभावशाली औषधियों के भण्डार भरे पड़े हैं। इन्हीं औषधियों में से कुछ का वर्णन इस पुस्तक में किया जा रहा है। भविष्य में, वह दिन भी दूर नहीं जब पाश्चात्य देश पूर्व के देशों की इस ज्ञान-सम्पदा में से कुछ न कुछ अवश्य ग्रहण करेंगे।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

कब्ज एवं बवासीर
भाग—I
रोग

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

कब्ज क्या है ?

कब्ज इतना अधिक सामान्य एवं प्रचलित रोग है कि इसकी विस्तृत परिभाषा देने एवं व्याख्या करने की कोई आवश्यकता नहीं है। संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि कब्ज वह स्थिति है, जिसमें रोगी अनियमित रूप से, बहुत कम मात्रा में तथा बहुत कठिनाई से पुरीष अथवा मल (colon) का त्याग कर पाता है।

बृहदान्त्र

बृहदान्त्र अथवा बड़ी आंत(colon) जठरान्त्र प्रणाली(gastro-intestinal tract) या पाचन-प्रणाली(alimentary tract) का अन्तिम भाग है। यह छोटी आंत के अन्तिम छोर से लेकर गुदा के मुख तक फैली हुई है। इसका घेरा अथवा व्यास(diameter) छोटी आंत की अपेक्षा काफी बड़ा होता है। परन्तु इस नली(tube) के अन्तिम भाग की ओर जाते-जाते यह घेरा क्रमशः कम होता जाता है। बड़ी आंत की लम्बाई छोटी आंत की अपेक्षा बहुत कम-लगभग 1.5 मी.— 1.8 मी. तक होती है। इस आंत का अन्तिम 7"-8" का भाग 'मलाशय'(rectum) तथा एकदम अन्तिम भाग 'गुदनाल'(anal canal) के नाम से जाने' जाते हैं। गुदनाल का श्लेष्मल अस्तर(mucous lining) अनेक लम्ब तहों(vertical folds) में बंटा होता है। इनमें से प्रत्येक तह(fold) में एक धमनी(artery) तथा एक शिरा(vein) पाई जाती हैं। गुदनाल(anal canal) की इन्हीं शिराओं में वृद्धि(enlargement) होने के कारण ही बवासीर अथवा अर्श(piles) होता है। गुदनाल को खोलने की क्रिया का नियन्त्रण दो अवरोधनी पेशियां(sphincter muscles) करती हैं। इनमें आन्तरिक पेशी अनैच्छिक(involuntary) व चिकनी(smooth) मांसपेशियों(muscles) से बनी होती है तथा बाह्य पेशी का निर्माण ऐच्छिक(voluntary) व उत्तेजक(stirated) मांसपेशियाँ करती हैं।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

मल का विसर्जन किस प्रकार होता है?

गुद-श्लेष्मा (rectal mucosa) में स्थित ग्राहक तत्त्वों में जब उत्तेजना (stimulation) उत्पन्न होती है, उसी के फलस्वरूप मल-विसर्जन (defecation) की क्रिया होती है। इस प्रकार यह एक प्रतिवर्त अर्थात् बिना इच्छा के होने वाली क्रिया (reflex action) है। सामान्यत: मलाशय खाली रहता है। आंतों की पुर:सरण (peristalsis) क्रिया के कारण मल पदार्थ बृहदान्त्र (colon) से मलाशय में आ जाते हैं। इस कारण मलाशय फूल जाता है और इसी की प्रतिक्रिया रूप में मनुष्य को मलत्याग की इच्छा होती है। इस इच्छा के होने पर, गुदनाल (anal canal) के मुख को खोलने वाली दो अवरोधिनी पेशियों में से आन्तरिक पेशी (internal muscle) खुलती है। इसी की प्रतिवर्त क्रिया (reflex action) के फलस्वरूप उदर की पेशियां मल को बाहर धकेलने के लिए दबाव डालती हैं। इस क्रिया में गुदनाल की बाह्य पेशी (external muscle) भी खुल जाती है और मल बाहर की ओर गति करता है। मल त्याग की इच्छा होने पर यदि कोई व्यक्ति जान बूझकर इस इच्छा को दबा देता है, तो वह तब तक पुरीष (stool) का त्याग नहीं कर सकता, जब तक आंतों में पुर: सरण (peristalsis) गति दुबारा नहीं आ जाती है। इस क्रिया में कुछ घंटे लग जाते हैं। और यदि कोई मल-विसर्जन की आवश्यकता को बार-बार दबाता रहता है, तो वह व्यक्ति कब्ज का शिकार हो जाता है। यह मल मलाशय में ही जमा रहता है।

कब्ज का परिणाम

जब मलाशय (rectum) में जमा हुआ मल अथवा पुरीष (stool) बाहर नहीं निकलता, तो भोजन की पाचन क्रिया (digestion) और धात्वग्निपाक क्रिया (metabolism) के दौरान उत्पन्न होने वाले मल पदार्थ और अधिक मात्रा में बृहदान्त्र (colon) और मलाशय (rectum) में जमा होने लगते हैं। इस पुरीष (stool) में पाये जाने वाले जलीय अंश का रक्त के प्रवाह में आचूषण (absorption) हो जाता है। यही जलीय अंश पुरीष को मुलायम बनाता है। इसके अभाव में, पुरीष सख्त हो जाता है और इस सख्त पुरीष के कारण गुदा (anus) की दीवारों, स्थानीय वाहिनियों (vessels) एवं गुदामुख पर घाव हो जाते

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

हैं। इसके परिणामस्वरूप, बवासीर (piles) और 'गुद विदर' (anal fissures– गुदा के द्वार पर छोटे-छोटे घाव हो जाना) जैसे रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इन घावों में सूजन एवं दर्द होने के कारण गुदनाल (anal canal) की अवरोधिनियां (sphincters) भी ठीक तरह से नहीं खुल पातीं। इस प्रकार मल का विसर्जन उचित प्रकार से नहीं होता और फिर कब्ज हो जाती है। इस प्रकार यह चक्र चलता रहता है और व्यक्ति असुविधा तथा कष्ट का अनुभव करता है। तव रोग के कुछ स्थानीय लक्षणों एवं शरीर के दूसरे भागों में होने वाले कुछ अन्य लक्षणों को देखकर रोगी चिकित्सक के पास इलाज के लिए जाता है।

पुरीष अथवा मल (Feces)

पुरीष का कुछ भाग तो हमारे खाये गये भोजन से बनता है, जबकि इसका अधिकांश भाग धात्वग्निपाक क्रिया (metabolic process) से उत्पन्न मल पदार्थों (byproducts) से बनता है। यह क्रिया वृहदान्त्र की दीवार (colon wall) से परिस्रवित (secreted) होने वाले रक्त में चलती रहती है। इस पुरीष में 65% जल तथा 35% ठोस पदार्थ होते हैं। हम जो खाद्य-पदार्थ ग्रहण करते हैं, उनमें वहुत से सैलूलोज़ (cellulose) तत्व ऐसे होते हैं, जिन पर मुंह में स्थित लाला ग्रन्थियों (salivary glands), आमाशय में स्थित छोटी ग्रन्थियों, यकृत् (liver), पैन्क्रियास (pancreas) और छोटी आंत से परिस्रवित होने वाले पाचक रसों का कुछ प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिए भोजन के ये तत्व अपरिवर्तित ही रहते हैं। इस प्रकार ये उपपाद (byproducts) पुरीष की मात्रा को बढ़ाते हैं। यही कारण है कि यदि कोई व्यक्ति वहुत समय तक उपवास भी रखता है, तो भी उसके वृहदान्त्र (colon) में पुरीष वनता ही रहता है। यहां तक कि मां के गर्भाशय में स्थित बच्चे में (जो कुछ भी नहीं खाता) भी पुरीष (stool) बनता रहता है। यह गहरे हरे रंग का होता है, जिसे 'जातविष्ठा' या 'म़ीकोनियम' (meconium) कहते हैं। वच्चे के जन्म के साथ ही यह पुरीष वाहर निकलता है। यदि पुरीष अथवा मल ठीक समय पर वाहर नहीं निकलता, तो इससे पाचन-क्रिया में शिथिलता आ जाती है। रक्त में मल-पदार्थ जमा हो जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति जल्दी ही बूढ़ा हो जाता है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

पुरीष में जीवाणु

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि पुरीष का 35% भाग ठोस (solid) पदार्थों से बना होता है। इन ठोस पदार्थों में 1/3 से 1/5 भाग तक जीवाणु होते हैं। हम प्रतिदिन जो मलत्याग करते हैं, उसमें से लगभग 8 ग्रा. सूखे हुए जीवाणु बाहर निकल आते हैं। इनमें से अधिकांश जीवाणु मृत होते हैं। बृहदान्त्र (colon) में स्थित कुछ जीवाणु शरीर के लिए लाभदायक होते हैं। क्योंकि ये आवश्यक विटामिनों का निर्माण करते हैं। और कुछ जीवाणु हानिकारक होते हैं। कब्ज होने पर, ये हानिकारक जीवाणु शरीर से बाहर नहीं निकल पाते, इसलिए बड़ी आंत में ही रहते हैं। इन हानिकारक जीवाणुओं के रहते (चाहे जीवित हों अथवा मृत हों) लाभकारक जीवाणु भी कार्य करना बन्द कर देते हैं। और इन हानिकारक जीवाणुओं के विषैले तत्व रक्त के प्रवाह में मिल जाते हैं, जिससे धात्वग्निपाक क्रिया (metabolic process) में शिथिलता आ जाती है।

आंत्रवायु (Flatus)

आमाशय और आंत में भोजन के पाचन की क्रिया के समय अनेक प्रकार के पाचक रस (enzymes) उसमें मिलते हैं। इन रसों के मिलने से भोजन के तत्वों में अनेक प्रकार की प्रतिक्रिया होती है। इन प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप, एक निश्चित मात्रा में वायु अथवा गैस (gas) बनती है, जिसे आन्त्रवायु (flatus) कहते हैं। सामान्य तौर पर यह गैस पुरीष के साथ ही बाहर निकल जाती है। परन्तु, यदि कब्ज हो, तो यह गैस छोटी और बडी आंतों में जमा हो जाती है और आंत की दीवार पर दबाव डालती है। वैसे सामान्य रूप से पुरीष के उत्सर्जन के लिए गुदा में 2–3 मि.मी. (mm. Hg.) का दबाव पर्याप्त होता है। परन्तु कब्ज के कारण, जब पुरीष के साथ वायु बाहर नहीं निकल पाती, तब बृहदान्त्र (colon) में पुरीष और गैस, दोनों का ही दबाव बढ़ जाता है। जब यह दबाव 20–26 मि.मी. (mm.Hg.) तक बढ़ जाता है, तो रोगी बहुत कठिनाई का अनुभव करता है।

जब कभी मनुष्य वायुकारक खाद्य-पदार्थों जैसे दालें, राजमाष, चना, तले व भारी पदार्थों,का सेवन करता है तो यह वायु अधिक मात्रा में बनती है। इस कारण पुरीष के उत्सर्जन में रुकावट आ जाती है और व्यक्ति पूरी तरह से मलत्याग नहीं कर पाता।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

परिणामत: वह कब्ज का शिकार हो जाता है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि यह गैस पुरीष के दो समूहों(masses) के बीच में कोटरिका(pockets) के रूप में रुक जाती है। मल-त्याग की क्रिया के समय पुरीष का एक समूह(mass) ही बाहर निकल पाता है। शेष पुरीष गुदा में ही रह जाता है, इस प्रकार कब्ज हो जाता है। जो गैस गुदा में होती है, वह भी जलीय अंश को सुखा देती है और पुरीष को कठोर बना देती है। इस कठोर पुरीष के बाहर निकलने में बहुत कठिनाई होती है तथा गुदा की दीवारों के साथ यह रगड़(friction) खाती है। इसके परिणामस्वरूप व्यक्ति बवासीर(piles) और गुद विदर अथवा गुद फिशर (anal fissures) का शिकार हो जाता है।

बवासीर अथवा अर्श (Piles)

बृहदान्त्र का लगभग एक इंच का आखिरी भाग गुद(anus) कहलाता है। गुद का श्लेष्मल अस्तर (mucous lining) अनेक लम्ब तहों (vertical folds) से बना होता है। प्रत्येक तह(fold) में एक धमनी(artery) एवं एक शिरा(vein) होती है। इन्हीं शिराओं के द्वारा ही यकृत(liver) के माध्यम से गुद प्रदेश का अशुद्ध रक्त हृदय(heart) में पहुंचता है। यदि गुदा से हृदय तक जाने वाले रक्त के प्रवाह में कोई रुकावट आ जाती है अथवा सख्त पुरीष के कारण यदि इन शिराओं की दीवारों में अधिक घर्षण या रगड़(friction) आ जाती है, तो ये शिराएं फूल जाती हैं। जब इन फूली हुई शिराओं पर अधिक दबाव पड़ता है, तो ये टूट जाती हैं अथवा विदीर्ण(rupture) हो जाती हैं। परिणामत: इनसे रक्त बहने लगता है तथा गुद प्रदेश में सूजन आ जाती है। कभी-कभी ये फूली हुई शिराएं, मल-त्याग के समय गुदा(anus) से बाहर आ जाती हैं। बार-बार ऐसा होने पर ये शिराएं अपने आप अन्दर नहीं जा सकतीं और गुदा के बाहर ही रहती हैं। तब मल-त्याग के पश्चात् इन्हें अपनी अंगुलियों की सहायता से ही अन्दर धकेलना पड़ता है।

गुदा में दो अवरोधिनियां (sphincters) होती हैं— अन्त: अवरोधिनी (internal sphincter) और बाह्य अवरोधिनी(external sphincter)। इन दोनों ही अवरोधिनियों के समीप बवासीर (piles) हो सकती है। अन्त: अवरोधिनी के समीप पाई जाने वाली बवासीर को 'अन्त: अर्श' अथवा 'आन्तरिक बवासीर' (internal piles) तथा बाह्य अवरोधिनी के समीप पाई जाने वाली

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

बवासीर को 'बाह्य अर्श' अथवा 'बाहरी बवासीर'(external piles) के नाम से जाना जाता है। बाहरी बवासीर तो दिखाई देती है, परन्तु आन्तरिक नहीं। आन्तरिक बवासीर का पता तभी चलता है, जब पुरीष के साथ रक्त भी आता है।

कब्ज के कारण

कब्ज के प्रमुख कारक तत्वों को हम निम्न चार श्रेणियों में बांट सकते हैं—

(i) **वेगरोध**— मल-त्याग, (defecation) की स्वाभाविक आवश्यकता (natural urge) को दबाकर रखने अथवा ठीक समय पर मल त्यागने में लापरवाही बरतने से कब्ज उत्पन्न होती है।

(ii) **अनुचित खान-पान**— अधिक मात्रा में परिष्कृत(refined) अन्न एवं वायुकारक खाद्य-पदार्थ लेने से तथा सब्जियाँ एवं जल कम मात्रा में लेने से व्यक्ति कब्ज का शिकार हो जाता है। इसके अतिरिक्त, जो भोज्य एवं पेय पदार्थ यकृत(liver) को सुस्त व कमजोर(sluggish) बनाते हैं, उनके सेवन से भी कब्ज एवं बवासीर (piles) हो जाती है।

(iii) **निष्क्रिय अथवा आरामतलब रहना**— जो व्यक्ति पर्याप्त मात्रा में शारीरिक श्रम नहीं करते तथा अधिक आराम-पसन्द होते हैं, उनमें कब्ज एवं बवासीर की संभावना अधिक होती है।

(iv) **नींद की कमी एवं मानसिक दबाव (Tension)**—जो व्यक्ति रात को पूरी नींद नहीं सो पाता, उसके मस्तिष्क को पर्याप्त आराम नहीं मिलता। इसका कुप्रभाव पाचन क्रिया पर पड़ता है। इसी प्रकार जो व्यक्ति मानसिक दबाव(tension) से ग्रस्त रहता है, उसकी पाचन-क्रिया पर भी कुप्रभाव पड़ता है। इस दूषित पाचन के कारण वह कब्ज का रोगी हो जाता है।

(v) **कृत्रिम रसायनों (Synthetic chemicals) से बनी औषधियों का प्रयोग**— इस प्रकार की औषधियों के सेवन से आंतों की क्रियाओं का नियन्त्रण करने वाली नाड़ियों(nerves) पर बुरा प्रभाव पड़ता है। कई बार इन औषधियों के प्रयोग से आंतें कमज़ोर हो जाती हैं, जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति कब्ज से पीड़ित हो जाता है। इसी तरह दर्द को कम करने तथा मानसिक शान्ति एवं नींद के लिए अफ़ीम(opium) तथा

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

इससे तैयार की गई औषधियों का प्रयोग किया जाता है। ये सब औषधियां कब्ज कारक होती हैं। आधुनिक युग में, अनिद्रा तथा मानसिक अशान्ति बढ़ने के साथ-साथ इस प्रकार की औषधियों का प्रयोग भी निरन्तर बढ़ता जा रहा है। परिणामस्वरूप कब्ज एवं बवासीर की समस्याएं भी बढ़ती जा रही हैं।

बवासीर अथवा अर्श (Piles) के कारण

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि गुद प्रदेश (anal region) में स्थित शिराओं (veins) से दूषित रक्त हृदय (heart) तक जाता है। यह रक्त यकृत् (liver) के माध्यम से पहुंचता है। कभी-कभी कुछ विशेष कारणों से गुदा से हृदय तक पहुंचने वाले इस रक्त-प्रतिवाह (back-flow) में रुकावट आ जाती है। वे कारण जो इस रक्त-प्रवाह में रुकावट उत्पन्न करते हैं, तथा जो गुद में स्थित शिराओं की दीवारों को कमज़ोर बनाते हैं, वे ही बवासीर (piles) उत्पन्न करने में भी मुख्य कारण हैं।

गुद की शिराएं आंतों के पीछे की ओर से, गुदा से यकृत् तक जाती हैं। यदि बृहदान्त्र (colon) पुरीष (feces) से फूला हो तो रक्त के इस प्रतिवाह (back-flow) में रुकावट आ जाती है। यदि यकृत् (liver) में कब्ज, अनुचित भोजन अथवा हानिकारक औषधियों एवं पेयों के सेवन से अधिक मात्रा में रक्त जमा हो जाता है, तो भी इस प्रतिवाह (back-flow) में रुकावट आ जाती है। परिणामस्वरूप व्यक्ति बवासीर (piles) का शिकार हो जाता है।

पुरीष में जलीय अंश की कमी से कठोरता आ जाती है। जब यह सख्त पुरीष बाहर निकलता है, तो इससे इन शिराओं की दीवारों में घर्षण या रगड़ (friction) तथा घाव हो जाते हैं। इस प्रकार बवासीर हो जाती है। कभी-कभी कब्ज होने के कारण, व्यक्ति को मलोत्सर्ग के लिए आवश्यकता से अधिक उदरीय दबाव (abdominal pressure) डालना पड़ता है। इससे शिराओं में विकार आ जाता है। इस प्रकार, प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष, किसी भी रूप में कब्ज ही बवासीर को उत्पन्न करने का सर्वप्रमुख कारण है।

वैसे, कुछ अन्य कारणों से भी बवासीर हो सकती है। जैसे, अर्बुद या गुल्म (tumour) होने पर शिराओं में रुकावट आ जाती है। इसी प्रकार गर्भवती स्त्रियों

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

में गर्भ से पड़ने वाले दवाव के कारण भी बवासीर हो जाती है। परन्तु इन कारणों से होने वाली बवासीर, कारणों को दूर करने पर अपने आप ठीक हो जाती है। जैसे अर्बुद (tumour) के समाप्त होने पर तथा बच्चे के प्रसव के बाद इस प्रकार की बवासीर शीघ्र ठीक हो जाती है।

कब्ज एवं बवासीर

कब्ज और बवासीर— इन दोनों का आपस में गहरा सम्बन्ध है। कब्ज बवासीर को उत्पन्न करती है, तो बवासीर कब्ज को। उपरोक्त विवरण से यह तो स्पष्ट हो चुका है कि कब्ज के कारण बवासीर होती है। जब व्यक्ति बवासीर से पीड़ित होता है, तो दर्द के कारण पर्याप्त मात्रा में पुरीष (stool) का त्याग नहीं कर पाता। प्रतिवर्त क्रिया (reflex action) के कारण बृहदान्त्र में से, रेचन (evacuation) के लिए पर्याप्त मात्रा में मल बाहर नहीं आ पाता। कई बार, बवासीर के मस्से, जो आन्तरिक अवरोधिनी (internal sphincter) के पास स्थित होते हैं, उनसे भी पुरीष के बाहर आने में रुकावट आ जाती है। इस प्रकार बवासीर का रोगी कब्ज से और अधिक पीड़ित हो जाता है। तथा कब्ज और बवासीर का यह दुष्चक्र चलता रहता है। अतः यह आवश्यक है कि इन दोनों की चिकित्सा एक साथ ही होनी चाहिए।

कब्ज के प्रमुख लक्षण

किसी मनुष्य में निम्नलिखित लक्षणों को देखकर यह कहा जा सकता है कि वह कब्ज से पीड़ित है:

(i) मुख के रोग

मुख व्यक्ति की बड़ी आंत की आन्तरिक स्थित का सूचक होता है अर्थात् किसी मनुष्य के मुख में जिह्वा, मसूढ़ों आदि की स्थिति को देखकर यह बताया जा सकता है कि वह कब्ज से पीड़ित है अथवा नहीं। कब्ज के रोगी की जिह्वा विलेपित (coated) अर्थात् एक प्रकार की मैल से ढकी होती है, साफ नहीं होती। उसके मुंह से सांस की बदबू आती है। कब्ज के रोगी के टांसिल्स बढ़े होते हैं (tonsillitis), मसूढ़ों में सूजन होती है व उनसे रक्त निकलता है तथा मुंह की श्लेष्मल झिल्ली (mucous membrane) में घाव होते हैं। कब्ज से पीड़ित व्यक्ति में बहुत

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

अधिक मात्रा में लार निकलती है। जब वह सो रहा होता है, तो यह लार मुंह से बाहर निकलती रहती है।

(ii) पेट व आमाशय में गड़बड़

कब्ज होने पर रोगी की भूख बहुत जल्दी समाप्त हो जाती है। वह जो कुछ भी खाता है,ठीक तरह से हजम नहीं होता। खाने के बाद उसका पेट भारी रहता है। उसे अरुचि (कुछ भी खाने की इच्छा न होना) एवं उल्टी की शिकायत रह सकती है। अनेक बार कब्ज के कारण उसे अत्यम्लता(hyper acidity) तथा छाती में जलन आदि की समस्याएं भी रहती हैं।

(iii) आंतों की स्थिति

कब्ज के कारण आंतों में वायु(flatus या gas) जमा हो जाती है। इससे उदर (abdomen) में अफारा पड़ जाता है। हम जो भोजन ग्रहण करते हैं, वह पूरी तरह से हज़म नहीं होता। इस प्रकार भोजन के पोषक तत्व आंतों से रक्त के स्रोत में समभावापन्न(absorb) नहीं होते। इससे रोगी के शरीर में पूरे पोषक तत्व नहीं पहुंचते और वह कुपोषण(malnourishment) का शिकार हो जाता है।

(iv) बृहदान्त्र की क्रिया में शिथिलता

कब्ज होने पर बहुत समय तक मल पदार्थ(fecal matter) बृहदान्त्र में इकट्ठे रहते हैं। इससे आंत में सूजन तथा घाव जैसी स्थानीय शिकायतें उत्पन्न हो जाती हैं। धीरे-धीरे इस अंग की मांस पेशियों(muscles) की क्रियाशीलता भी शिथिल होने लगती हैं। बवासीर(piles) इसी प्रकार की एक स्थानीय समस्या है जो कब्ज के परिणामस्वरूप ही होती है।

(v) छाती अथवा वक्षस्थल (Chest) के रोग

बहुत समय तक कब्ज रहने पर बहुत से व्यक्ति कास(bronchitis), दमा (asthma), स्वरयन्त्रशोथ(laryngitis) तथा ग्रसनीशोथ(pharyngitis) जैसे रोगों के शिकार हो जाते हैं। ऐसे रोगियों में धड़कन(palpitation) की शिकायत भी पाई जाती है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

(vi) सिरदर्द

कब्ज से पीड़ित व्यक्ति में सिरदर्द की शिकायत तो अक्सर पाई जाती है। ऐसे रोगी में दृष्टि सम्बन्धी समस्याएं तथा मोतियाबिन्द आदि भी देखें जाते हैं।

(vii) अनिद्रा

बहुत समय तक कब्ज होने पर, अधिकतर रोगी में अनिद्रा की शिकायत उत्पन्न हो जाती है। ऐसा रोगी चिड़चिड़ा एवं बहुत संवेदनशील (emotional) हो जाता है। उसे अनेक प्रकार के स्नायु सम्बन्धी (neurotic) रोग हो जाते हैं।

बवासीर (Piles) के लक्षण एवं कुप्रभाव

बवासीर होने पर रोगी को गुदा में दर्द, खुजली एवं जलन होती है, आंव आती है तथा बैठने व चलने में असुविधा होती है। मल-त्याग के समय पुरीष के साथ रक्त (bleeding) भी आता है। बार-बार और बहुत अधिक रक्तस्राव होने पर रोगी में रक्ताल्पता (anemia) हो जाती है। इन स्थानीय शिकायतों के अतिरिक्त रोगी में पुरानी कब्ज, भूख न लगना तथा यकृत (liver) का ठीक प्रकार से कार्य न करना आदि अन्य अनेक तकलीफें भी पाई जाती हैं।

आयुर्वेद के अनुसार बवासीर (Piles)

आयुर्वेद में बवासीर को 'अर्शस्' के नाम से जाना जाता है, जिसका अर्थ है, "ऐसा रोग, जो एक शत्रु की तरह लगातार तथा बार-बार दुःख और कष्ट देता रहता है।" इस रोग को हम तीन श्रेणियों में बांट सकते हैं 1) वातिक अर्श— जो बवासीर वायु के प्रकोप के कारण होती है, 2) पैत्तिक अर्श— जो बवासीर पित्त के कारण होती है, तथा 3) कफज अर्श— जो कफ दोष की अधिकता के कारण होती है। इन सभी प्रकार के अर्श की विशेषताएं निम्नलिखित हैं—

(i) वातिक अर्श

इस प्रकार के बवासीर में रक्त का प्रवाह नहीं होता। इसमें मस्से कठोर, खुरदरे, सूखे, कालापन लिये लाल रंग के, तीखे किनारों वाले, टेढ़े मेढ़े, फटे हुए अथवा घाव व झुर्रियों से युक्त तथा बिना किसी तरतीब के फैले होते हैं। इस प्रकार के अर्श

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

में शूल, चुभन, स्फुरण आदि से युक्त अनेक प्रकार से दर्द होती है। यह दर्द पीठ, लिंग (phallus) तथा वृषणकोष (scrotum) तक फैली होती है तथा दर्द के साथ दिल की धड़कन भी तेज़ हो जाती है।

(ii) पैत्तिक अर्श

इस प्रकार की बवासीर में मस्से कोमल, चिपचिपे, शिथिल और लचीले होते हैं। इनका रंग लाल, पीला, नीला या काला होता है। इनमें से पतला व पीले रंग का तरल पदार्थ निकलता है, जिसमें से कच्चे मांस की गंध आती है। इस द्रव के साथ रक्त भी निकलता है तथा जलन होती है। रक्तस्राव के कारण रोगी में रक्त की कमी (anemia) हो सकती है। इस प्रकार के अर्श के मस्से पक भी सकते हैं और उनमें पूय आदि भर जाती है।

(iii) कफज अर्श

बवासीर के इस प्रकार में मस्से लम्बे, सूजे तथा फूले हुए और चिकने होते हैं। इन्हें छूने से दर्द नहीं होता। ये मस्से नम, कड़े, भारी, दृढ, सुन्न तथा सफ़ेद रंग के होते हैं। इनमें बहुत अधिक खुजली होती है तथा इनमें से लगातार बहुत अधिक मात्रा में सफेद या लाल रंग का लिसलिसा द्रव निकलता रहता है। इसके साथ-साथ रोगी में अरुचि (nausea), तीव्र पीड़ा, उदर में भारीपन तथा उल्टी आदि की शिकायतें भी पाई जाती हैं। उसमें बार-बार मल-त्याग की इच्छा होती है और वह बहुत दर्द के साथ ही पुरीष त्याग कर पाता है।

शिशुओं में कब्ज

जन्म लेने के पश्चात् कुछ वर्षों तक बच्चे को पोषण के लिए मां, गाय, भैंस अथवा बकरी के दूध पर निर्भर रहना पड़ता है। ऐसी स्थिति में यदि मां को कब्ज रहती है अथवा गाय आदि का दूध अच्छा नहीं है तो बच्चे को भी कब्ज हो सकती है। कब्ज के साथ ही उसके पेट में अफारा, भूख न लगना, नींद न आना आदि समस्याएं भी रहती हैं। इस कारण वह रोता रहता है। ऐसी अवस्था में सर्वप्रथम तो मां को उचित प्रकार का भोजन और औषधि देनी चाहिए। यदि बच्चा गाय आदि पशुओं का दूध ले रहा है, तो उसे बदलना चाहिए। इस दूध के साथ सौंफ और आजवायन का चूर्ण उबालकर और फिर छानकर बच्चे को पिलाना चाहिए। इससे उसकी कब्ज दूर हो

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

जायगी। जहां तक सम्भव हो सके बच्चों को दवाई नहीं देनी चाहिए।

गर्भवती महिलाओं में कब्ज

गर्भवती महिलाओं में कब्ज एक सामान्य समस्या है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि इस अवस्था में उदर (abdomen) के निचले हिस्से में, विशेषकर गर्भाशय में कुछ परिवर्तन आते हैं। ऐसी स्थिति में, कोई भी तीव्र रेचक (strong purgative) नहीं देना चाहिए, क्योंकि इन औषधियों के प्रयोग से गर्भपात अथवा गर्भस्राव हो सकता है। इस तरह की महिलाओं को जहां तक सम्भव हो, ऐसे खाद्य-पदार्थों (पपीता, हरी सब्जियां आदि), पेयों (फलों का रस, सब्जियों का सूप आदि) तथा हल्की दवाओं का सेवन कराना चाहिए, जिससे अपने आप ही आसानी से मलत्याग की क्रिया हो सके। हल्की दवाओं में, ईसबगोल का छिलका अथवा गुलकन्द आदि दिया जा सकता है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

उपचार

बवासीर (Piles) में शल्य चिकित्सा (surgery) की उपयुक्तता

जैसा कि प्रारम्भ में बताया गया है, आधुनिक चिकित्सा के अनुसार बवासीर का वर्णन हमें केवल शल्य चिकित्सा के ग्रन्थों में ही मिलता है। इसका तात्पर्य यह है कि बवासीर ऐसा रोग है, जिसे आधुनिक चिकित्सक शल्य द्वारा ही साध्य मानते हैं, औषधियों के प्रयोग से नहीं। वैसे फूले हुए और रक्तस्राव वाले बवासीर के मस्सों को निकाल देना एवं बांध देना (ligate) है भी आसान। परन्तु इससे तो रोगी को केवल कुछ समय के लिए आराम मिल सकता है। क्योंकि जब तक बवासीर के मूल कारणों— कब्ज और यकृत (liver) की मंदक्रिया (sluggishness) को दूर नहीं किया जायगा, तब तक यह रोग दुबारा होता रहेगा, उस विशेष स्थान पर नहीं तो उससे कुछ हटकर हो सकता है। बार-बार शल्य द्वारा चिकित्सा होने से रोगी को दूसरे उपद्रवों का सामना करना पड़ सकता है। यदि कब्ज आदि उपरोक्त कारणों को ही दूर कर दिया जाए, तो बवासीर के पुनः आक्रमण की संभावना नहीं रहेगी। हां, यदि गुदा की पेशियों के शिथिल हो जाने के कारण बवासीर के मस्से रह जाते हैं, तो इन्हें शल्य क्रिया द्वारा निकाला जा सकता है।

बस्ति अथवा एनिमा (Enema) के नियमित प्रयोग का अनौचित्य

कुछ रेचक (purgative) औषधियों के सेवन के अतिरिक्त बस्ति (enema) का प्रयोग करके भी कब्ज को दूर किया जा सकता है। परन्तु इसका प्रयोग उसी स्थिति में करना उचित है, जब रोगी को अत्यधिक कब्ज हो तथा पेट में बहुत तीव्र पीडा हो। कुछ चिकित्सक गर्म जल में नमक, साबुन या एरण्ड का तेल (castor oil) मिलाकर उससे नियमित रूप से एनिमा करने की सलाह देते हैं। परन्तु यह आदत बहुत हानिप्रद एवं कृत्रिम है। यह उसी प्रकार अनुचित है जैसे किसी

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

बेरोज़गार व्यक्ति को, थोड़ा-थोड़ा भाग एकत्र करके सामान्य कमाई से भी अधिक दे देना। ऐसा करने से वह व्यक्ति एकदम निकम्मा बन जायगा। क्योंकि इस प्रकार बिना मेहनत के पर्याप्त धन मिल जाने के कारण वह किसी प्रकार का शारीरिक एवं मानसिक श्रम करने की बजाय मांगना अधिक पसन्द करेगा। इसी प्रकार प्रतिदिन एनिमा के प्रयोग से बड़ी आंत(colon) को अपना कार्य(पुरीष त्याग) करने में बहुत सहायता मिलेगी। उसे अपना स्वाभाविक श्रम भी नहीं करना पड़ेगा। इस तरह कुछ समय पश्चात्, अभ्यस्त हो जाने के कारण यह कार्य करना समाप्त कर देगी और मल-त्याग के लिए हमेशा एनिमा की ही आवश्यकता बनी रहेगी।

आयुर्वेद में भी कुछ विशेष प्रकार के औषधीय(medicated) एनिमा का उल्लेख मिलता है। इनके प्रयोग से स्नायु-मण्डल(nervous system) से सम्बन्धित रोगों(जिन्हें सामूहिक रूप में 'वातरोग' कहा जाता है) की चिकित्सा में बहुत लाभ मिलता है। ये एनिमा भी प्रतिदिन नहीं दिये जाते। इन्हें जड़ी-बूटियों के काढ़े (decoction), तेल, दूध आदि से तैयार किया जाता है। कुछ गम्भीर बीमारियों से बचने एवं उनकी चिकित्सा के लिए, रसायन(rejuvenation) के उद्देश्य से, उल्टियों आदि व किसी अन्य कारण से शरीर को पोषक तत्व न मिलने पर उसे पुष्ट करने के उद्देश्य से तथा आंतों में शरीर के लिए उपयोगी वनस्पति तत्व पहुंचाने के लिए इनका प्रयोग किया जाता है। इन एनिमा के प्रयोग का एक निश्चित कोर्स (course) होता है, जिनके प्रयोग के साथ विशेष प्रकार के खान-पान एवं आचार-व्यवहार का भी निश्चित कोर्स निभाना होता है। आयुर्वेद में बताये गये इन एनिमा के प्रयोग से लाभ ही होता है। इनकी तुलना हम साधारण एनिमा से नहीं कर सकते। इनका मुख्य उद्देश्य कब्ज़ दूर करना भी नहीं होता। इन एनिमा का प्रयोग कुछ गम्भीर एवं असाध्य रोगों के उपचार के उद्देश्य से ही किया जाता है। हां, इसके साथ गौण रूप से कब्ज में भी लाभ मिल सकता है।

क्या रेचक औषधियों(purgatives) का नियमित प्रयोग लाभप्रद है?

विकसित और सभ्य माने जाने वाले देशों में कब्ज एक बहुत प्रचलित समस्या है। यही कारण है कि वहां के लोग नित्यप्रति ही कोई न कोई रेचक औषधि (purgative) प्रयोग में लाते हैं। कई बार तो सुविधापूर्वक पुरीष-त्याग के लिए

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

तेज औषधियों का प्रयोग भी करते हैं। इन तीव्र औषधियों में एनिमा (enema) का प्रयोग तो बहुत हानिकारक है। यद्यपि इनसे रोगी को तत्काल आराम तो मिलता है, परन्तु इससे और अनेक समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। बृहदान्त्र (colon) पूरी तरह से इन रेचक औषधियों पर निर्भर हो जाती है और धीरे-धीरे कार्य करना समाप्त कर देती है। इन रेचक औषधियों के प्रयोग से बृहदान्त्र की अन्दर की दीवारों में संक्षोभ(irritation) उत्पन्न हो जाता है और उसके परिणामस्वरुप बृहदान्त्रशोथ(colitis) उत्पन्न हो जाता है तथा बृहदान्त्र की पेशियां निष्क्रिय हो जाती हैं। इस प्रकार बृहदान्त्र में अतानता(atonic) अथवा उद्वेष्टन(spasm) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

आयुर्वेद में चिकित्सा के क्षेत्र में 'पञ्च कर्म' एक विशिष्ट पद्धति है। इसका प्रयोग अनेक प्रकार के गम्भीर एवं असाध्य रोगों की चिकित्सा के लिए एवं उनसे बचाव के लिए किया जाता है। 'पञ्च कर्म' के अन्तर्गत पांच प्रकार की चिकित्सा आती है, ये हैं—1) वामक(emetic), 2) शोधन अथवा रेचक(purgation), 3) निरूह वस्ति(एक प्रकार का enema), 4) अनुवासन(एक दूसरे प्रकार का enema), तथा 5) शिरो विरेचन(सिर से कफादि दोषों को निकालने के लिए नस्य आदि)। इनमें से शोधन अथवा रेचन पद्धति का प्रयोग बहुत ही कम समय के लिए किया जाता है। इस पद्धति के प्रयोग से पहले तथा बाद में रोगी को कुछ विशेष नियमों एवं खान-पान का ही प्रयोग करना होता है। इसका मुख्य उद्देश्य भी कब्ज को दूर करना नहीं, अपितु कुछ गम्भीर प्रकार के रोगों की चिकित्सा करना है। इसलिए आयुर्वेद में बताई शोधन अथवा रेचन(purgation) पद्धति इन प्रचलित रेचक औषधियों से भिन्न प्रकार की है। तथा इससे इन औषधियों के समान हानि भी नहीं पहुंचती।

इस उपरोक्त विवरण से यह निष्कर्ष निकलता है कि कब्ज एवं बवासीर से बचने और इनकी चिकित्सा के लिए रोगी को उचित खान-पान एवं नियमों पर निर्भर रहना चाहिए। इसके साथ ही कब्ज करने वाले मुख्य कारणों को दूर करना चाहिए। इसी तथ्य को दृष्टि में रखते हुए, नीचे कब्ज के रोगी के लिए हितकर एवं हानिकर खान-पान एवं नियमों का उल्लेख किया जा रहा है—

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

भोजन

मनुष्य को आवश्यकता से अधिक भोजन नहीं करना चाहिए तथा पहले खाया हुआ भोजन हजम होने के पश्चात् ही दुबारा भोजन करना चाहिए। अन्यथा अधिक बोझ पड़ने के कारण भोजन-पाचन और मल-विसर्जन की क्रिया में रुकावट एवं शिथिलता आ जायगी। इस आधुनिक युग में प्रायः सभी युवा-पीढ़ी, विशेषकर लड़कियां, यह चाहती हैं कि वे मोटापे से बची रहें। मोटापे के डर से वे उचित मात्रा में भोजन नहीं करतीं। इसके साथ ही उपवास रखती हैं और अपनी भूख को मिटाने के लिए अधिक मात्रा में चाय अथवा कॉफी पीती हैं। वे यह नहीं समझ पाते कि मोटापे अथवा अधिक चर्बी बढ़ने का प्रमुख कारण धात्वग्निपाक क्रिया(metabolism) की अव्यवस्था है। इसके विपरीत कम भोजन एवं चाय, कॉफी आदि पीने से वे कब्ज और बवासीर के शिकार हो जाती हैं। अतः इस प्रकार की आदतों से बचना चाहिए।

आजकल परिष्कृत(refined) एवं बहुत बारीक अन्न खाने का प्रचलन बढ़ गया है। अनाज का मोटा भाग निकाल कर फेंक दिया जाता है। इस प्रकार मैदे की डबलरोटी(white bread), सफेद चीनी, पालिश किये हुए चावल, आदि प्रयोग में लाये जाते हैं। इस तरह के भोजन में मांड तत्व ही बचे रहते हैं। भोजन के असली तत्व तथा गुण अधिकांशतः परिष्कार(refining) की प्रक्रिया में ही समाप्त हो जाते हैं। अतः मनुष्य को इस सभी प्रकार के भोजन से, जैसे सफेद डबलरोटी, पेस्ट्री, मैदे से बनी सेंवियां, केक, बिस्कुट आदि से परहेज रखना चाहिए। बहुत अधिक बारीक (paddy) एवं मुलायम भोजन, जैसे पुडिंग(puddings) आदि भी नहीं खाने चाहिए। इनके अतिरिक्त डिब्बा बंद(tinned), संरक्षित(preserved) एवं बासी भोजन से भी बचना चाहिए। ये सब पदार्थ पाचन-क्रिया को बिगाड़ कर कब्ज पैदा करते हैं।

दालों के पाचन में बहुत अधिक मात्रा में गैस बनती है। इसी प्रकार तले हुए पदार्थ भी यकृत की क्रिया पर कुप्रभाव डालते हैं। अतः कब्ज होने पर, मनुष्य को दालों एवं तले हुए पदार्थों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

मनुष्य को नियमित रूप से एवं समय पर भोजन करने की आदत डालनी चाहिए। ताजे फल, किशमिश, मुनक्का, कच्चा सलाद, स्वास्थ्य के नियमों के अनुसार तैयार की गई सब्जियां, बिना पॉलिश किये चावल, छान आदि से युक्त तथा थोड़े मोटे आटे से तैयार रोटी-ये सब खाद्य-पदार्थ कब्ज के लिए बहुत उपयोगी हैं।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

समय पर भोजन ग्रहण करना

प्रत्येक मनुष्य को नाश्ता, दोपहर एवं सायं का भोजन समय पर ही करना चाहिए। आज के युग में मनुष्य का जीवन बहुत व्यस्त हो गया है। इसका भुगतान उसके भोजन को ही करना पड़ता है। न तो वह समय पर खाता है और जो खाता है बहुत जल्दी में ही खाता है। वह जब भी किसी मित्र, अथवा सम्बन्धी के घर जाता है या मीटिंग अथवा पार्टी में या किसी उत्सव में जाता है वहां उसे अवश्य कुछ खाना पीना पड़ता है। प्रायः उसे देर रात को खाना-पीना होता है। इस सबका प्रभाव उसके पाचन एवं आंतों की क्रिया पर पड़ता है। परिणामतः वह कब्ज तथा बवासीर का शिकार हो जाता है। रात को देर से सोने पर प्रातः भी देर से उठ पाता है। फिर अपने कार्य पर समय से पहुंचने के लिए या तो वह नाश्ता कर ही नहीं पाता और यदि करता है तो बहुत जल्दी में। इसका परिणाम भी कब्ज एवं बवासीर हैं। अतः मनुष्य को अपनी इन सभी आदतों को सुधारना चाहिए।

भोजन को चबाकर खाना

चबाकर खाया गया भोजन अच्छी तरह एवं जल्दी हज़म हो जाता है, क्योंकि इस प्रकार भोजन में पर्याप्त मात्रा में लार मिल जाती है। भोजन चबाने से आंतों की क्रिया भी सुचारू रूप से चलती है। यही कारण है कि बूढ़े व्यक्ति, जो भोजन अच्छी तरह से चबा नहीं सकते, प्रायः कब्ज से पीडित रहते हैं। इसी तरह परिष्कुत आटे(refined flour) से बना भोजन तथा जैली (jelly) आदि meshy भोजन चबाया नहीं जाता। अतः कब्ज करता है। जल्दी-जल्दी में बिना चबाये ही भोजन निगल लेना, आज के युग की प्रमुख समस्या है, जो कब्ज़ का मुख्य कारण है। इसलिए प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि वह अपनी दिनचर्या इस प्रकार की बनाये, जिससे उसे भोजन आदि के लिए पर्याप्त समय मिल सके। घूमते हुए, पढते हुए अथवा टेलीविज़न देखते एवं रेडियो आदि सुनते-सुनते खाने की आदत से भी बचना चहिए।

अनाज

मुख्यतः चावल एवं गेहूं को भोजन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इनमें गेहूं का भोजन, कब्ज से पीड़ित रोगी के लिए अधिक उपयुक्त है। गेहूं के आटे का प्रयोग इसका छान निकाले बिना ही करना चाहिए तथा बिना पालिश किये चावल खाने चाहिए। जौ, मक्का, ज्वार एवं बाजरा— ये सब अनाज भी कब्ज के लिए बहुत

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

लाभदायक हैं। जई (oat) का भोजन एवं अंकुरित मोथी (buck wheat) के आटे से बनी ब्राउन ब्रेड (brown bread) भी बहुत उपयोगी हैं।

इसके विपरीत मैदे से बनी सीवियां, केक, पेस्ट्री, बिस्कुट आदि खाद्य-पदार्थ कब्ज और बवासीर दोनों के लिए हानिकारक हैं।

सब्जियां

सब्जियां कब्ज होने पर दवा का काम करती हैं। अत: कब्ज एवं बवासीर से पीड़ित व्यक्तियों को सब्जियों का, विशेषत: पत्तेवाली सब्जियों का अधिक से अधिक मात्रा में प्रयोग करना चाहिए। इनमें मेथी, पालक, परवल, कुन्दुरु, करेला, बैंगन, पत्ता गोभी, गाजर, चुकन्दर, शलगम, हरा पपीता, सफेद पेठा, टमाटर, बड़ी लाल मिर्च (capsiuium), सहंजन की फली तथा ज़िमीकन्द बहुत ही लाभदायक हैं। इनका प्रयोग दोपहर और सांय दोनों समय के भोजन में किया जा सकता है। इसके विपरीत आलू, फूलगोभी, अर्वी, भिण्डी, कटहल तथा पीला पेठा कब्जकारक तथा पेट में अधिक गैस बनाते हैं। अत: इनका प्रयोग नहीं करना चाहिए। हरी एवं ताजी सब्जियों का नियमित रूप से सलाद के रूप में प्रयोग करना बहुत लाभप्रद है।

ज़िमीकन्द

सब्जियों में ज़िमीकन्द बहुत उपयोगी औषधि है। यह भूमि के अन्दर उगने वाला कन्द है। इसका प्रयोग अनेक प्रदेशों में एक सब्जी के रूप में किया जाता है ज़िमीकन्द को उबालकर, मसलकर एवं मसाले मिलाकर भी सब्जी बनाई जाती है, जो बहुत लाभप्रद है। इस कन्द में एक विशेष प्रकार का स्वाद पाया जाता है, जिससे यह जीभ व गले में संक्षोभ (irritation) पैदा करता है। इसके इस असर को दूर करने के लिए, उबालते समय, नींबू का रस या इमली आदि कोई खट्टा पदार्थ मिला लेना चाहिए। यह कब्ज एवं बवासीर में लाभ करता है। इसका विस्तृत वर्णन, इसी पुस्तक में वर्णित ज़िमीकन्द के लेख में किया गया है।

फल

कब्ज और बवासीर से बचने के लिए तथा इनके उपचार के लिए फलों और फलों के रस का उपयोग बहुत उपयोगी है। डिब्बाबन्द रस की अपेक्षा ताज़ा रस अधिक लाभकारी है। फलों में पका पपीता, सेब, नाशपाती, आम, अमरूद, आलूबुखारा

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

आदि का नियमित रूप से प्रयोग करने पर पेशाब खुलकर आता है तथा पाचक रसों और यकृत में पित्त (bile) का स्राव भी पर्याप्त मात्रा में होता है। इससे व्यक्ति को कब्ज की कोई शिकायत नहीं रहती है।

इसी प्रकार अंगूर भी बहुत लाभप्रद हैं। विशेषकर मुनक्का एवं सूखे बेर (prunes) अधिक उपयोगी हैं। ये हल्के रेचक (mild laxative) होते हैं। इन्हें रात को पानी में भिगोकर रखना चाहिए तथा प्रातः मसलकर लुगदी (paste) बनाकर खाने से अधिक लाभ पहुंचता है।

चिकने पदार्थ (Fats)

अधिक शक्ति एवं पोषक तत्व प्राप्त करने के लिए पशु जगत् से प्राप्त चर्बी वाले पदार्थों (fats) तथा वनस्पतियों से बनाये तेलों का इस्तेमाल सारे संसार में किया जाता है। इनको भोजन पकाते समय उनमें मिलाकर अथवा स्वतन्त्र रूप में भी प्रयोग किया जाता है। पशु जगत् से प्राप्त चर्बीयुक्त पदार्थ, जैसे मक्खन, घी आदि वनस्पति तेलों की अपेक्षा अधिक उपयोगी हैं। वानस्पतिक तेलों में तिल का तेल सर्वोत्तम है। इसके विपरीत मूंगफली का तेल अत्यधिक हानिप्रद है। आजकल, विशेषकर उन्नत देशों में 'रक्त में कोलेस्ट्रोल (cholesterol) की अत्यधिक वृद्धि' की समस्या बहुत बढ़ गई है। यह समस्या धात्वग्निपाक क्रिया (metabolic process) से सम्बन्धित है। परन्तु इस मूल कारण को न समझते हुए, चिकित्सक मूंगफली का तेल खाने की सलाह देते हैं, क्योंकि इसमें कोलेस्ट्रोल की मात्रा बहुत कम होती है। यह तेल यकृत को और अधिक कमज़ोर बना देता है, जिसके परिणामस्वरूप कब्ज, बवासीर एवं अफारा जैसी शिकायतें सामने आती हैं। अतः कब्ज आदि से बचने के लिए घी, मक्खन, तिल का तेल, सरसों का तल और नारियल का तेल ही प्रयोग में लाना चाहिए, मूंगफली का नहीं। बादाम एवं बादामरोगन भी बहुत उपयोगी हैं।

दालें

शाकाहारी व्यक्ति अपने भोजन में सब्जियों के साथ दालों का बहुतायत से प्रयोग करते हैं, क्योंकि इनसे प्रोटीन के रूप में पोषक तत्व प्राप्त होते हैं। इन दालों में मूंग, माष (उड़द), राजमाष, चने, अरहर आदि मुख्य हैं। इनमें मूंग के अतिरिक्त सभी दालें अधिक वायु उत्पन्न करती हैं तथा कब्ज करती हैं। अतः इनका कम मात्रा में

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

प्रयोग करना चाहिए तथा पकाते समय इनमें घी, लहसुन, अदरख, हींग, जीरा आदि वायुनाशक मसाले मिला लेने चाहिए।

मांस और मछली

जितना भी मांसाहारी भोजन है— मांस, मछली और अण्डे— वह कब्जकारक है। अण्डे तो बहुत अधिक कब्ज करते हैं। समुद्री मछली, खास तौर पर प्रॉन(prawn) मछली तो अत्यधिक कब्जकारक है। अत: कब्ज से पीड़ित व्यक्ति को ये सब पदार्थ नहीं खाने चाहिए। जहां तक सम्भव हो सके सब्जियों, विशेषकर पत्तेवाली सब्जियों का प्रयोग करना चाहिए। इससे कब्ज और बवासीर दोनों के बचाव और उपचार में सहायता मिलेगी।

उपरोक्त सामान्य खान-पान के अतिरिक्त मनुष्य में सामान्यत: स्वादवश एवं अन्य कारणों से कुछ खास प्रकार के पदार्थों के सेवन की आदत पड़ जाती है। इन पदार्थों के बिना वह रह नहीं सकता, परन्तु ये पदार्थ अधिक मात्रा में लेने से उसके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालते हैं। इसी तरह के कुछ पदार्थ निम्नलिखित हैं:

चाय और कॉफी

चाय और कॉफी जैसे गर्म पेय पदार्थों को अधिक मात्रा में लेना हानिप्रद है। रोगी को चाहिए कि वह इन पेय पदार्थों के सेवन से बचे। यदि लेना ही हो तो कम मात्रा में, दिन में दो कप से ज्यादा नहीं लेना चाहिए। कुछ लोग शौच क्रिया की सुविधा के लिए खाली पेट चाय लेते हैं। प्रारम्भ में हो सकता है कि गर्म पेय होने के कारण इससे रोगी को कुछ लाभ मिले, परन्तु वास्तव में चाय और कॉफी कब्जकारक होते हैं। इसके साथ ही ये यकृत की क्रिया को भी कमजोर करते हैं। अधिक मात्रा में लेने से नींद भी ठीक प्रकार से नहीं आती। इसका परिणाम भी पाचन क्रिया में गड़बड़ तथा कब्ज ही होगा।

प्रात: उठते ही खाली पेट चाय(bed tea) लेना तो अत्यधिक हानिप्रद है। इससे कब्ज और बवासीर हो जाती है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

मादक द्रव

भारत जैसे कुछ देशों में मादक द्रवों का सेवन करना सामाजिक दृष्टि से मान्य नहीं है, जबकि कुछ अन्य देशों में इनका सेवन नियमित रूप से ही किया जाता है। आसवन (distillation) की क्रिया से तैयार किये गये व्हीसकी (whisky), ब्राण्डी (brandy), और वोड्का (vodka) जैसे मादक द्रव पोषक होते हैं तथा पाचन शक्ति को बढ़ाते हैं। परन्तु अधिक मात्रा में सेवन करने से तथा ठीक समय पर न लेने से यकृत् को कमजोर कर देते हैं, यहां तक कि यकृत् के सिरोसिस (cirrhosis) का कारण भी बनते हैं। परिणामत: पाचन शक्ति पर बुरा प्रभाव पड़ता है और व्यक्ति कब्ज एवं बवासीर का रोगी हो जाता है।

इसके विपरीत, वे द्रव्य जिनमें अल्कोहल का स्वयं निर्माण होता है (self-generated), जैसे बीअर (bear) तथा आयुर्वेद में वर्णित **आसव,** और **अरिष्ट** हानिकारक नहीं होते। इनमें से **कुमार्यसव, द्राक्षासव, अभयारिष्ट** एवं **द्राक्षारिष्ट** के लगातार सेवन से कब्ज दूर होती है। इन आसव एवं अरिष्टों का सेवन भोजन के पश्चात् समान मात्रा में जल मिलाकर करना चाहिए।

तम्बाकू

कुछ लोगों को तम्बाकू लेने की आदत होती है। वे इसे सिगरेट अथवा पाइप के रूप में या सीधा तम्बाकू चबा कर लेते हैं। गर्म चाय की तरह वे तम्बाकू का प्रयोग भी शौच क्रिया की सुविधा के लिए करते हैं। प्रारम्भ में उन्हें कुछ फायदा हो सकता है, परन्तु कुछ समय पश्चात् फायदा तो कुछ नहीं होता, बल्कि कब्ज अधिक बढ़ जाती है। अत: कब्ज से बचने के लिए आवश्यक है कि तम्बाकू आदि लेने की आदतों को छोड़ा जाए।

तला हुआ भोजन

हम लोग भोजन एवं अन्य खाद्य-पदार्थों को स्वादिष्ट और रुचिकर बनाने के लिए उन्हें खूब तलकर प्रयोग में लाते हैं। बहुत भारी एवं कठोर होने के कारण इन पदार्थों का पाचन कठिन हो जाता है। इस प्रकार ये यकृत् के लिए हानिप्रद सिद्ध होते हैं।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

प्राय: आंतें इन न पचे हुए पदार्थों को आगे मलाशय तक नहीं जाने देती। इस प्रकार यकृत् की क्रिया के शिथिल हो जाने पर पाचन क्रिया में गड़बड़ हो जाती है और इससे आंतों की क्रिया व गति भी ठीक प्रकार नहीं होती। परिणामत: व्यक्ति कब्ज और बवासीर का शिकार हो जाता है।

इन उपरोक्त हानिकारक पदार्थों एवं आदतों के विपरीत कुछ ऐसे साधारण से खाद्य एवं पेय पदार्थ भी हैं, जिनका किसी समय विशेष अथवा ढंग विशेष से प्रयोग करने पर कब्ज एवं बवासीर के रोगों में रामबाण औषधि की तरह लाभ मिलता है। इनमें प्रमुख लाभदायक पदार्थों का नीचे उल्लेख किया जा रहा है—

रात को सोते समय गर्म दूध का प्रयोग

प्रतिदिन रात को भोजन करने के कम से कम दो घंटे पश्चात् और सोने से पहले एक गिलास गर्म दूध पीने से मनुष्य कब्ज से बचा रह सकता है। यह दूध ताजा होना चाहिए तथा इसे उबालकर प्रयोग में लाना चाहिए। जहां तक हो सके गाय अथवा बकरी का दूध ही लेना चाहिए। क्योंकि भैंस के दूध तथा अन्य पास्चुरीकृत (pasteurised) दूध से अनेक बार बदहजमी हो जाती है तथा आंतों में अधिक गैस बनती है।

, यदि गाय अथवा बकरी का ताजा दूध न मिल सके, तो भैंस का अथवा पास्चुरीकृत (pasteurised) दूध लेकर, उसमें अदरख अथवा सोंठ या सौंफ का चूर्ण मिलाकर उबाल लेना चाहिए। यह दूध प्रयोग में लाया जा सकता है। इस प्रकार तैयार किया गया दूध पचने में तो हल्का होता ही है, इसके अतिरिक्त आंतों में अधिक गैस भी पैदा नहीं करता और न ही कब्जकारक होता है।

पाश्चात्य देशों में लोग पास्चुरीकृत और ठण्डा दूध पीना ही पसन्द करते हैं। परन्तु ठण्डा दूध भारी होता है तथा हजम भी कुछ देर से होता है। इसके विपरीत, उबाला हुआ तथा गर्म दूध हल्का तथा आसानी से हज़म होने वाला है। इसके साथ ही गर्म दूध से नींद भी अच्छी आती है।

प्रात: काल खाली पेट एक गिलास पानी पीना

कोई मनुष्य कितना भी परहेज़ रखे, फिर भी कभी न कभी खान-पान में अथवा किन्हीं दूसरे नियमों में कुछ भूल हो ही जाती है, जिससे कब्ज हो सकती है। इस तरह

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

की गलतियों के उपाय के लिए तथा कब्ज से बचे रहने के लिए एक सरल व सस्ता तरीका है कि प्रत्येक मनुष्य सुबह बिस्तर से उठने के बाद, कुल्ला आदि करके एक गिलास ठण्डा पानी पीने की आदत बना ले। यदि रात को तांबे के बर्तन में पानी रख दिया जाए और सुबह वही पी लिया जाए, तो यह इस दृष्टि से बहुत ही लाभदायक होता है।

रात को एक गिलास पानी में, एक चम्मच त्रिफला का चूर्ण(आंवला, हरड़ और बहेड़े को समान मात्रा में मिलाकर तैयार किया गया चूर्ण) भिगोकर रख लेना चाहिए। प्रात: काल इस जल को पतले व साफ कपडे से छान कर चूर्ण को फेंक दें और पानी खाली पेट में पी लें। इससे कब्ज, बवासीर, अत्यम्लता(hyper acidity), मधुमेह(diabetes) तथा अधिक रक्त चाप जैसे रोगों में बहुत लाभ मिलता है। आंखों की रोशनी भी बढ़ती है। यह एक रसायन है।

वैसे भी, साधारण तौर पर एक स्वस्थ मनुष्य को सारे दिन में चार-पांच गिलास (लगभग2 लिटर) पानी जरूर पीना चाहिए। गर्मियों के मौसम में तो अधिक मात्रा में पीना चाहिए। इससे कब्ज और बवासीर से बचे रहने में बहुत सहायता मिलती है।

मट्ठा अथवा दही की लस्सी: अमृत के समान उपयोगी

दूध एवं दूध से तैयार किये गये घी, मक्खन, पनीर, क्रीम, दही एवं दही की लस्सी आदि पदार्थों को भोजन के प्रमुख पदार्थों के रूप में प्रयोग किया जाता है। शाकाहारी लोग पशु-जगत् से प्राप्त इन पदार्थों को प्राय: अधिक मात्रा में प्रयोग में लाते हैं। वैसे तो अनेक पशुओं के दूध को उपयोग में लाया जाता है, परन्तु गाय, भैंस एवं बकरी का दूध अधिक मात्रा में प्रयुक्त होता है। मंगोलिया जैसे कुछ स्थानों में लोग घोड़ी एवं ऊंटनी का दूध बहुतायत से प्रयोग करते हैं। घोड़ी का दूध अधिक पौष्टिक माना जाता है तथा ऊंटनी के दूध में बहुत से औषधीय गुण पाये जाते हैं। पहाड़ी एवं ठण्डे स्थानों में मादा याक एवं संकर जातियों के अनेक प्रकार के पशुओं के दूध को इस्तेमाल में लाया जाता है।

मट्ठा अथवा लस्सी(butter milk) बनाने के लिए, सबसे पहले दूध को उबालकर दही तैयार किया जाता है। यह दही खट्टा नहीं होना चाहिए। इस दही में एक-चौथाई भाग अथवा आधा भाग पानी मिलाकर इतना मथना(churne) चाहिए कि इसमें से क्रीम निकल आए। पतली लस्सी अपेक्षाकृत अधिक अच्छी होती

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

है। इस लस्सी में जीरे का चूर्ण एवं नमक मिलाकर पीना चाहिए। जो लोग नमकीन लस्सी नहीं पसन्द करते, वे इसमें चीनी भी मिला सकते हैं। यकृत(liver) सम्बन्धी विकारों में, इस लस्सी के प्रयोग से बहुत लाभ मिलता है। अत: कब्ज एवं बवासीर— इन दोनों ही रोगों में इसे एक औषधि के रूप में नियमित रूप से प्रयोग में लाया जा सकता है।

अपनी पाचन-शक्ति के अनुसार रोगी घी, मक्खन एवं क्रीम आदि पदार्थों का सेवन कर सकता है। परन्तु घी आदि से तले हुए पदार्थों के सेवन से उसे पूरी तरह परहेज़ रखना चाहिए।

उपयोगी मसाले

साधारणत: लोगों में यह गलत धारणा है कि मसाले पेट के लिए हानिकारक हैं। परन्तु इनमें कुछ मसाले पेट के लिए विशेष रूप से उपयोगी हैं, क्योंकि इनके प्रयोग से पेट व आंतों में वायु भी कम बनती है तथा कब्ज एवं बवासीर में भी आराम मिलता है। यूरोपीय भोजन एवं खाद्यों में तो मसालों का प्रयोग न के बराबर ही होता है। परन्तु पूर्वीय देशों के भोजन एवं अन्य पकवानों में मसालों एवं विभिन्न प्रकार के सब्जी चूर्णों(curry powder) का प्रयोग बहुतायत से किया जाता है। इन मसालों में, मिर्चें (लाल व हरी) जठरान्त्रप्रणाली (gastro-intestinal tract) के लिए बहुत हानिकारक हैं। इनके प्रयोग से बवासीर में भी जलन एवं संक्षोभ आदि अधिक हो जाते हैं, इससे रक्तस्राव(bleeding) होने लगता है। परिणामस्वरूप, बृहदान्त्रशोथ(colitis) जैसे रोग भी हो सकते हैं। मिर्चों के विपरीत, अजवायन, काली मिर्च, अदरख, मेथी, पिप्पली(long pepper), जीरा, लौंग, इलायची, दालचीनी तथा हींग आदि मसाले तो बहुत उपयोगी हैं। इनके प्रयोग से यकृत् और अधिक अच्छी प्रकार कार्य करता है तथा कब्ज में भी आराम मिलता है।

हल्दी, जिसे प्राय: सभी सब्जियों में डाला जाता है, कब्ज एवं बवासीर— दोनों को ठीक करने एवं इनसे बचने के लिए बहुत ही उपयोगी औषधि है। प्रतिदिन रात को सोते समय, एक चम्मच हल्दी का चूर्ण दूध के साथ लेने से व्यक्ति इन रोगों से बचा रह सकता है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

व्यावसायिक विवशताएं एवं व्यायाम

सामान्यतः बुद्धिजीवियों, व्यवसाय से सम्बन्धित उच्चपदाधिकारियों, प्रबन्धकों एवं व्यावसायिकों को अपना कार्य करने के लिए लगातार बहुत समय तक बैठे ही रहना पड़ता है। कहीं आने जाने के लिए भी, आजकल कार, स्कूटर आदि वाहनों की सुविधाएं उपलब्ध हैं। इस प्रकार ये व्यक्ति अपने शरीर से चलने-फिरने जैसी आसान से आसान एवं साधारण क्रिया भी नहीं कर पाते। इस प्रकार सारा दिन कुर्सी अथवा वाहन(कार, स्कूटर आदि) पर बैठने के बाद, रात्रि को वे सीधा बिस्तर में सो जाते हैं और शरीर से किसी भी प्रकार का व्यायाम नहीं हो पाता। इन परिस्थितियों में कब्ज एवं बवासीर जैसे रोग किसी भी मनुष्य पर आसानी से आक्रमण कर सकते हैं।

अतः आज के इस आराम के युग में, प्रातः एवं सांय भ्रमण करना, खाली पेट में सुबह कुछ शारीरिक व्यायाम करना, सांयकाल किसी प्रकार का खेल-कूद करना अथवा प्रातः समय कुछ योगासन करना प्रत्येक मनुष्य के लिए बहुत आवश्यक एवं लाभप्रद हैं। योगासनों में पद्मासन, वज्रासन, पश्चिमोत्तानासन, हलासन और सर्पासन आदि कुछ सामान्य यौगिक आसन हैं, जिन्हें नियमित रूप से करने पर मनुष्य कब्ज से बचा रहता है। यदि वह कब्ज से पीड़ित है, तो उससे छुटकारा मिल जाता है। यदि आंतों में पुरीष(stool) आदि मल इकट्ठा हो तो 'कुञ्जल' एवं 'शंख प्रक्षालन' आदि क्रियाएं करने से यह मल निकल जाता है और मनुष्य बवासीर से बचा रहता है। ये क्रियाएं बहुत साधारण एवं सरल भी हैं। यह ध्यान रखना चाहिए कि किसी योग्य शिक्षक द्वारा ही इन्हें सीखा जाए, बिना सीखे इन्हें नहीं करना चाहिए।

नींद एवं आराम

उचित नींद एवं आराम लेने से मनुष्य की पाचन-क्रिया एवं मलोत्सर्ग की क्रिया स्वाभाविक रूप से चलती रहती है। यदि मनुष्य ठीक समय पर नहीं सोता और न ही ठीक समय पर जागता है, तो इससे उसकी शौच-क्रिया भी अनियमित हो जाती है। इस प्रकार धीरे-धीरे वह कब्ज एवं बवासीर का शिकार हो जाता है। इसलिए इन रोगों से छुटकारा पाने के लिए आवश्यक है कि शरीर को पूरा आराम मिले और नियमित नींद मिलती रहे।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

मानसिक शान्ति

जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है, मानसिक विचारों का पाचन-क्रिया एवं धात्वग्निपाक क्रियाओं से सीधा सम्बन्ध है। जो मनुष्य मानसिक रूप से अशान्त, चिन्ताग्रस्त, मानसिक दवाव(tension) से ग्रस्त एवं क्रोधग्रस्त रहता है, उसका यकृत(liver) ठीक प्रकार से कार्य नहीं कर पाता। वह अनिद्रा, कब्ज एवं ववासीर से पीड़ित रहता है। अतः इन रोगों से वचे रहने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य, कम से कम भोजन करते समय तो, इन सव प्रकार की मानसिक चिन्ताओं से दूर रहकर शान्त वना रहे। मानसिक शान्ति प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य अपनी इच्छा शक्ति(will power) वढ़ाये, कुछ समय धार्मिक पुस्तकों के स्वाध्याय एवं धार्मिक क्रियाओं में लगाये तथा प्राणायाम आदि यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करे। प्राणायाम से मनुष्य वहुत शीघ्र ही मानसिक शान्ति प्राप्त कर सकता है, क्योंकि इसके अभ्यास से मन एकाग्र होता है। प्राणायाम की अनेक विधियां योगशास्त्र में लिखी मिलती हैं। यह अच्छा होगा कि किसी योग्य एवं अनुभवी व्यक्ति की देख रेख में ही प्राणायाम की विधि सीखी जाए। वैसे ही किसी पुस्तक आदि में पढ़कर करने से कभी-कभी हानि भी हो जाती है।

पूर्वदेशीय (Oriental) शौचालय

पश्चिमी देशों में शौचक्रिया के लिए शौचालयों में ऊंचे पात्र व सीटें (commodes or high lavatory) सी वनाई जाती हैं। ये सीटें मलोत्सर्ग के उद्देश्य से वैठने के लिए आरामदायक तो हो सकती हैं, परन्तु इस क्रिया के अनुकूल नहीं हैं। क्योंकि इन पर वैठकर मलोत्सर्ग की क्रिया में स्वाभाविक रूप से किसी प्रकार की सहायता नहीं मिलती। इसके विपरीत, भारत आदि पूर्व के देशों में जो नीचे सीटें वनी होती हैं, वे मलोत्सर्ग क्रिया के अनुरूप हैं। इन पर जिस ढंग से वैठा जाता है, उससे स्वाभाविक रूप से ही इस प्रकार की स्थिति वन जाती है कि व्यक्ति की टांगें उसके पेट से सटी रहती हैं। इस प्रकार स्वाभाविक रूप से ही उसके पेट पर दवाव पड़ता है और पुरीष त्यागने में आसानी रहती है। परन्तु आधुनिक सभ्यता के नाम पर, आजकल भारत जैसे देशों में भी लोग पाश्चात्य देशों की तरह ऊंचे-ऊंचे पात्र(high seated commodes) वनवाते जा रहे हैं। गठिया एवं संधिवात (rheumatism) के रोगियों को तो इनसे लाभ हो सकता है, क्योंकि इन पर

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

घुटने मोड़ कर नहीं बैठना होता। परन्तु बैठने की स्वाभाविक स्थिति न होने के कारण, व्यक्ति कब्ज़ एवं बवासीर से पीड़ित हो जाता है। अत: जहां तक हो सके इन पूर्वदेशीय शौचालयों का प्रयोग करना चाहिए, जिससे स्वाभाविक एवं स्वतन्त्र रूप से पुरीष त्याग किया जा सके।

औषधियां

ऊपर बताये गये कुछ विशिष्ट नियमों के पालन करने एवं सावधानियां बरतने के साथ-साथ कुछ विशेष जड़ी-बूटियों एवं फलों आदि का प्रयोग करने से कब्ज़ एवं बवासीर का रोगी, इन रोगों से शीघ्र छुटकारा पा सकता है। इस तथ्य को लक्ष्य में रखकर, इस पुस्तक के अगले भाग में, चुनी हुई ग्यारह औषधियों का वर्णन किया जा रहा है। इन औषधियों का वर्णन उनमें पाए जाने वाले कब्ज एवं बवासीर जैसे रोगों की रोकथाम एवं चिकित्सा-सम्बन्धी गुणों को लक्ष्य करके किया गया है। इनमें से कुछ औषधियों का प्रयोग साधारण फल एवं सब्जी के रूप में भी प्रचलित है। पिछले हज़ारों वर्षों से ही इन औषधियों का प्रयोग भारत एवं उसके पड़ोसी देशों में होता चला आ रहा है। आज भी आयुर्वेदिक चिकित्सक इन औषधियों एवं इनसे बनी अन्य दवाओं का प्रयोग सफलतापूर्वक कर रहे हैं। इन औषधियों के अतिरिक्त अन्य भी अनेक औषधियां हैं, जिनका प्रयोग कब्ज एवं बवासीर की चिकित्सा के लिए किया जा सकता है। परन्तु औषधीय गुणों, लोकप्रियता एवं सरलता से प्राप्त होने के कारण यहां पर केवल इनहीं औषधियों को चुना गया है।

आयुर्वेद में किसी भी औषधि की संरचना एवं उसके शरीर पर प्रभाव डालने की क्रियाविधि का वर्णन आधुनिक चिकित्सा-पद्धति से भिन्न प्रकार से किया गया है। परन्तु, पुस्तक के आकार को देखते हुए, यहां इस प्रकार का वर्णन नहीं किया जा रहा। ये औषधियां केवल कब्ज एवं बवासीर से ही सुरक्षा प्रदान नहीं करतीं, अपितु इसके साथ शरीर के सभी अंगों पर अपना प्रभाव डालती हैं। इस प्रकार बिमारी जड़ से दूर हो जाती है। अत: रोगी के साथ-साथ एक स्वस्थ व्यक्ति भी नि:शंक होकर इनका प्रयोग कर सकता है। इनके प्रयोग से स्वस्थ व्यक्ति कब्ज एवं बवासीर के आक्रमण से बचा रहता है तथा उसके स्वास्थ्य में वृद्धि होती है।

ये जड़ी-बूटियां शरीर के लिए पूरी तरह से सुरक्षित हैं। इनके प्रयोग से किसी भी प्रकार के दुष्प्रभाव की संभावना नहीं है। इसके अतिरिक्त ये औषधियां तो शरीर के दूसरे अंगों

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

को भी शक्ति प्रदान करती हैं। इससे रोगी के शरीर में रोग-प्रतिरोधक शक्ति इतनी अधिक आ जाती है कि रोग के पुनः आक्रमण की आशंका नहीं रहती। इन औषधियों से किसी भी प्रकार के कुप्रभाव की संभावना न होने के कारण; कोई भी व्यक्ति पुस्तक में दी गई सेवन-विधियों के आधार पर इनका प्रयोग सरलतापूर्वक कर सकता है। यदि निर्दिष्ट मात्रा से अधिक मात्रा में भी इनका सेवन कर लिया जाय, तो भी किसी तरह की हानि नहीं होती। पूर्णतः सुरक्षित होने के कारण, इन जड़ी-बूटियों के उपयोग की कोई समयावधि भी निश्चित नहीं की गई है। प्रस्तुत औषधियों में, कब्ज एवं बवासीर-प्रतिरोधी गुणों के साथ-साथ अन्य अनेक औषधीय गुण भी हैं। परन्तु विस्तार-भय से इन सब गुणों का संकेतमात्र किया जा रहा है, केवल रोग-सम्बन्धी गुणों का ही संक्षिप्त वर्णन किया जा रहा है।

इन सभी औषधियों के स्वतन्त्र उपयोग के साथ-साथ कुछ अन्य औषधियां मिलाकर भी इनको उपयोग में लाया जाता है। आयुर्वेदिक ग्रन्थों में, इस तरह के अनेक योगों का उल्लेख मिलता है तथा आजकल के औषधि-निर्माता भी इस प्रकार के अनेक योग तैयार करते हैं। ये औषधियां बाजार में औषधि-विक्रेताओं के यहां उपलब्ध होती हैं। इन दवाओं में, अंग्रेजी दवाओं के समान रासायनिक पदार्थ (synthetic chemicals) नहीं मिलाये जाते। इन्हें तैयार करते हुए, जड़ी-बूटियों का चूर्ण, क्वाथ(decoction), रस तथा सत्त्व(extract) आदि मिलाये जाते हैं। इस प्रकार, मिश्रित औषधियों से तैयार किये गये योगों का प्रभाव, साधारण जड़ी-बूटी की अपेक्षा बहुत बढ़ जाता है। एक विशिष्ट रोग के साथ-साथ ये औषधियां दूसरे रोगों में भी लाभ पहुंचाती हैं। अधिक समय तक सुरक्षित रहती हैं तथा इन्हें सुविधापूर्वक खाया भी जा सकता है। ये योग अलग-अलग औषधि निर्माता अलग-अलग विधियों से तैयार करते हैं। इस प्रकार के कुछ प्रमुख योगों के नामों की सूची, प्रत्येक औषधि से सम्बद्ध लेख के अन्त में दी जा रही है।

इन औषधियों एवं जड़ी-बूटियों का प्रयोग रोग के पूर्णतः ठीक होने तक तो अवश्य करना ही चाहिए। इसके पश्चात् भी कुछ समय तक इनका सेवन करते रहना चाहिए, जिससे आमाशय, यकृत् एवं आंत्र आदि विभिन्न अंग अपना कार्य सुचारु रूप से करते रहें तथा व्यक्ति नियमित रूप से पुरीष त्याग का अभ्यस्त हो जाए। इस प्रकार वह कब्ज एवं बवासीर दोनों से बचा रहेगा।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

भाग-2

जड़ी-बूटियों से उपचार

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

अमलतास (Purging Cassia)

विभिन्न भाषाओं में नाम

अंग्रेजी– पर्जिंग कासिया (Purging cassia); उड़िया– सुनारी गच्छ; उर्दू– अमलतास; कन्नड़– फलूस; गुजराती– गरमालो; तमिल– कोंड्रि, अरुक्कुवेडम्; तेलुगु– आरग्वधमु, कोलपोन्न; पंजाबी– गिर्दनली, कियार; बंगाली– आमुलतास, सोंदाल; मराठी– बाहवा; मलयालम– कोन्न, स्वर्णकम्, कृतमालम्; लैटिन– कैसिया फिस्टुला (Cassia fistula); संस्कृत– आरग्वध, शम्पाक, चतुरंगुल, कृतमाल; सिंधी– छिमकणी; हिन्दी– अमलतास।

प्रयोज्य अंग

अमलतास के फल का गूदा, फूल, पत्ते एवं जड़ की छाल औषधि के रूप में इस्तेमाल की जाती है।

उत्पत्ति स्थान

उष्ण-कटिबन्ध के जंगलों में यह वृक्ष जंगली रूप से पाया जाता है। इसके सुन्दर पीले फूलों के कारण बगीचों एवं उपवनों में इसकी खेती भी की जाती है।

वर्णन

अमलतास का वृक्ष 7.5 मी.– 10.5 मी. ऊंचा होता है। इसके तने का घेराव 0.9 मी.– 1.2 मी. होता है। इसके फूल अप्रैल से जून तक आते हैं। ये पीले रंग के एवं गुच्छों में लगे हुए बहुत सुन्दर दिखाई पड़ते हैं। अमलतास के फल (फलियां) लम्बे होते हैं, जिनकी लम्बाई 25 सें.मी.– 50 सें.मी. तथा घेरा 1.5 सें.मी.– 3 सें.मी. होता है। प्रत्येक फली में 25 से 50 तक बीज होते हैं और इन बीजों के चारों ओर काला गूदा लिपटा रहता है। औषधि में मुख्य रूप से यही गूदा प्रयुक्त किया जाता है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

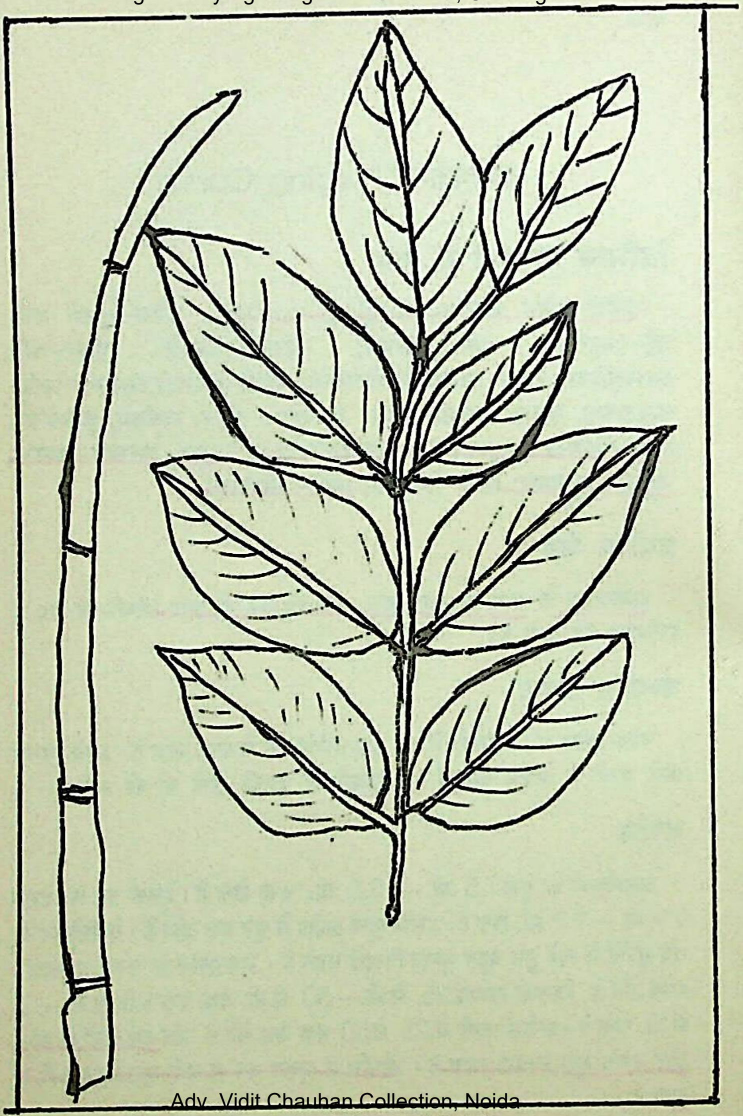

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

अमलतास (Cassia Fistula)

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

औषधीय गुण

अमलतास का गूदा बहुत अच्छा रेचक है। इस गूदे के प्रयोग से किसी प्रकार की हानि की आशंका नहीं होती। यही कारण है कि बच्चे और गर्भवती महिलाएं भी इस औषधि का निःशंक रूप से प्रयोग कर सकते हैं। कब्ज के अतिरिक्त अमलतास का प्रयोग बवासीर, अरुचि, भूख न लगना, पेट में वायु बनना, शूल, यकृत सम्बन्धी रोग, पीलिया, हृदय रोग, कास(bronchitis), दमा, पेशाब करते हुए दर्द होना, चर्म रोग, पुराना ज्वर, सन्धिवात, गठिया और वातरक्त(gout) आदि रोगों की चिकित्सा में भी किया जाता है।

एक्ज़ीमा, खुजली(scabies), सोरियासिस(psoriasis), जोड़ों में दर्द एवं सूजन— इन सब रोगों के होने पर अमलतास की पत्तियां और जड़ की छाल का कल्क (paste) बनाकर बाह्य रूप से लगाया जाता है।

औषधि निर्माण एवं प्रयोग विधि

अमलतास की पकी फलियों को रेत के ढेर के बीच में सात दिन के लिए दबाकर रख दिया जाता है। फिर इन्हें धूप में सुखाकर छोटे-छोटे टुकड़े बना लिये जाते हैं। इन टुकड़ों के अन्दर बीज के आस-पास लगा तथा फलियों में लगे गूदे को अलग कर लिया जाता है। गूदा अलग करने के लिए, बीजों और फलियों के टुकड़ों को पानी में भिगोकर रख लेना चाहिए और फिर अच्छी तरह मसल लें। इस प्रकार गूदा पानी में मिल जायगा। पानी को छानने से बीज, फलियां एवं लकड़ी के टुकड़े अलग हो जायेंगे। अब इस पानी को या तो धूप में सुखा लेना चाहिए या किसी बर्तन में डालकर धीमी आंच पर सुखा लें। जब यह कुछ गाढ़ा हो जाए, तो इसमें पिप्पली का चूर्ण और अनार का रस मिला लें। इस मिश्रण को फिर धूप में रखें, जिससे जलीय अंश पूरी तरह सूख जाए। तब इसे साफ एवं सूखी कांच की शीशियों में भर दें। इस सत्त्व को इसी रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है अथवा चाय या किसी गर्म पेय में मिलाकर भी प्रयोग में लाया जा सकता है।

अमलतास की जड़ की छाल का चूर्ण, चाय(infusion) अथवा काढ़ा बनाकर प्रयोग किया जाता है। पत्तों का काढ़ा बनाया जाता है। फूलों को छाया में सुखाकर चूर्ण कर लिया जाता है। इस चूर्ण का काढ़ा(infusion) बनाकर भी प्रयुक्त किया जाता

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

है तथा शीतकषाय रूप में भी। शीतकषाय के लिए, फूलों के एक चम्मच(5 ग्रा.) चूर्ण को एक गिलास पानी में भिगोकर रातभर पड़ा रहने दें। प्रातः इस जल को कपड़े से छानकर, खाली पेट में पी लें।

बाहय प्रयोग के लिए, अमलतास की जड़ की छाल को अच्छी तरह साफ करके कल्क(paste) बना लें। इस दृष्टि से ताजी छाल अधिक उपयोगी है। यदि ताजी न मिले, तो सूखी हुई छाल भी उपयोग में लाई जा सकती है। परन्तु यह बहुत पुरानी नहीं होनी चाहिए। कल्क(paste) बनाने के लिए इस सूखी छाल को कुछ देर पानी में भिगो कर रखना चाहिए। इस कल्क को रात को रोग वाले अंग पर लगा दें और ऊपर से पट्टी बांध दें। सूजन और दर्द वाले जोड़ पर यह कल्क गर्म करके लगाना चाहिए।

मात्रा

गूदा

दो-दो चम्मच(10 ग्रा.), दिन में दो या तीन बार, किसी गर्म पेय के साथ दें। यह गूदा स्वाद में मीठा होता है। अतः जब इसमें अनार का रस मिला लिया जाता है, तो यह बहुत स्वादिष्ट बन जाता है। इसे बच्चे एवं गर्भवती स्त्रियां भी रुचि से खा सकती हैं।

चूर्ण

एक-एक चम्मच(5 ग्रा.) दिन में तीन बार, किसी गर्म पेय के साथ दें।

काढ़ा

6–6 चम्मच(30 मि.लि. या एक औंस), दिन में तीन बार चीनी या गुड़ मिलाकर दें। कब्ज एवं बवासीर के लिए, यह काढ़ा गर्म ही लेना चाहिए।

कल्क (Paste)

खाने के लिए, एक चम्मच(5 ग्रा.), दिन में तीन बार किसी गर्म पेय से दें।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

योग

(i) आरग्वधादि लेप;
(ii) आरग्वधारिष्ट;
(iii) आरग्वधादि तैल;
(iv) दशमूलारिष्ट।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

अंगूर एवं मुनक्का (Grapes)

विभिन्न भाषाओं में नाम

अंग्रेजी– ग्रेप (Grape); उड़िया– द्राक्ष्य, गोस्तोनि; उर्दू– अंगूर; गुजराती– दराख, द्राक्ष; तमिल– चीमुंडे, कोट्टणि, तेलुगु– द्राक्षापण्डु, किसुमीसु; पंजाबी– दाख, अंगूर; बंगाली– द्राक्षा, आंगूर; मराठी– द्राक्ष; मलयालम– चारुफल, मधुरसम्; लैटिन– वाइटिस विनिफेरा (Vitis vinifera); संस्कृत– द्राक्षा, गोस्तनी, मृद्वीका; सिन्धी– द्राक; हिन्दी– दाख, मुनक्का, अंगूर।

प्रयोज्य अंग

इसके फल औषधि के रूप में प्रयुक्त होते हैं।

उत्पत्ति स्थान

अंगूर की खेती समशीतोष्ण जलवायु वाले एवं उष्ण-कटिवन्ध के समीप के इलाकों में की जाती है।

वर्णन

यह एक बड़ी बेल (climb) है, जिसकी लम्बाई लगभग 30 मी. होती है। इसके फल गोल अथवा अंडाकार होते हैं तथा इनका रंग हरापन लिये अथवा बैंगनी रंग लिये काला होता हैं। इन फलों के माप एवं आकार में अन्तर मिलता है। कुछ किस्म के फलों में बीज होते हैं तथा कुछ में बीज नहीं होते। सूखें हुए अंगूरों को किशमिश या मुनक्का (raisins) कहा जाता है। अंगूरों की जिस किस्म में बीज पाये जाते हैं, वे तो 'मुनक्का' कहलाते हैं और जिनमें बीज नहीं होते, वे 'किशमिश' कहलाते हैं। जहां पर मौसम अनुकूल होता है, वर्षा आदि नहीं होती, वहां इन अंगूरों को धूप में सुखाया जाता है। अन्यथा इन्हें कृत्रिम तरीके से वन्द एवं तारों से वनी अलमारियों (wireshelved racks) में भी सुखाया जाता है। कई बार अंगूरों को सुखाने से

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

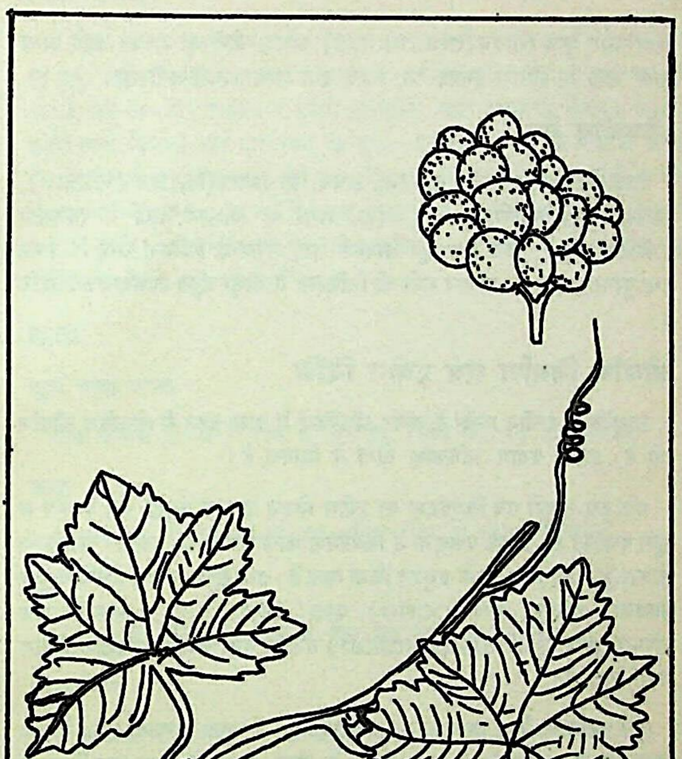

अंगूर एवं मुनक्का (Vitis Vinifera)

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

पहले उनमें कुछ रसायन(chemicals) अथवा चीनी का शरबत आदि मिला लिया जाता है, जिससे इनका रंग, स्वाद तथा गन्ध अच्छी बनी रहे।

औषधीय गुण

कब्ज, बवासीर, पेट में वायु बनना, अपच, अत्यम्लता(hyper acidity), पीलिया, भूख न लगना, कास, दमा, शरीर के विभिन्न अंगों मे रक्तस्राव (bleeding), हृदय रोग, मूत्र-सम्बन्धी रोग, शरीर के विभिन्न अंगों में जलन तथा पुराना बुखार— इन सब रोगों की चिकित्सा में अंगूर बहुत लाभदायक औषधि है।

औषधि निर्माण एवं प्रयोग विधि

आयुर्वेद के प्राचीन ग्रन्थों में वर्णित औषधियों में द्राक्षा बहुत ही लोकप्रिय औषधि रही है। इसका प्रयोग अधिकांश योगों में मिलता है।

पके हुए अंगूरों एवं किशमिश का प्रयोग भोजन के एक प्रमुख अंग के रूप में बहुत प्रचलित है। अनेक पकवानों में किशमिश का प्रयोग किया जाता है। ताजे फलों को रस(juice) के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। तथा सूखे फलों(किशमिश और मुनक्का) का चूर्ण, कल्क(paste), काढ़ा(decoction), आसव अथवा अरिष्ट(alcoholic preparation) बनाकर तथा घी के साथ पकाकर प्रयोग किया जाता है।

चूर्ण बनाने के लिए मुनक्का अथवा किशमिश को पुनः सुखाया जाता है और पीसा जाता है। कल्क(paste) बनाने के लिए, इनमें थोड़ा सा जल मिलाकर पीसना चाहिए।

मुनक्का का निम्नलिखित योग कब्ज और कास(bronchitis) की चिकित्सा के लिए बहुत उपयोगी है— सूखा मुनक्का, मुलहठी, पिप्पली (long pepper), काली मिर्च और छुआरा— प्रत्येक समान मात्रा में लेकर चूर्ण कर लें। इस चूर्ण में घी और शहद मिलाकर लेह(linctus) बनाकर सेवन करें।

द्राक्षा का एक अन्य योग बहुत लोकप्रिय एवं उपयोगी है— द्राक्षारिष्ट। इसको तैयार करने की विधि निम्नलिखित है:

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

2.400 कि.ग्रा. मुनक्का 50 लि. जल के साथ उबालें। जब एक चौथाई जल शेष रह जाए, तो इस काढ़े को छानकर ठंडा होने दें। इसमें 9.600 कि.ग्रा. गुड़ डालकर अच्छी तरह मिलायें। तत्पश्चात्, इसमें दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपत्र, केसर, काली मिर्च, पिप्पली और वायविडंग का चूर्ण— प्रत्येक 48 ग्रा. की मात्रा में मिला लें। इस मिश्रण में खमीर आदि कोई पदार्थ मिलाकर घी से तर किये हुए मिट्टी के घड़े में डालकर सीलबन्द करके रख दें। चार सप्ताह बाद इसे निकालकर छान लें और साफ़ व सूखी हुई बोतलों में भर दें। यह द्राक्षारिष्ट कब्ज, बवासीर, कास, दमा एवं तपेदिक के लिए बहुत उपयोगी है।

मात्रा

चूर्ण तथा कल्क

एक चम्मच (5 ग्रा.), दिन में तीन बार किसी गर्म पेय के साथ लें।

काढ़ा

6 चम्मच (30 मि.लि. या एक औंस), दिन में तीन बार पीयें।

लेह

2 चम्मच (10 ग्रा.), दिन में तीन बार सेवन करना चाहिए।

द्राक्षारिष्ट

6 चम्मच (30 मि.लि.), दिन में दो बार भोजन के पश्चात् समान मात्रा जल मिलाकर लें।

घृतपाक

एक से तीन चम्मच (5–15 मि.लि.), दिन में एक बार प्रातः एक प्याला गर्म दूध के साथ लें।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

योग

(i) द्राक्षारिष्ट;
(ii) द्राक्षासव;
(iii) द्राक्षादि क्वाथ;
(iv) द्राक्षा घृत;
(v) द्राक्षादि योग;
(vi) द्राक्षादिपान;
(vii) द्राक्षादि लेह।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

ईसबगोल (Spogel seeds)

विभिन्न भाषाओं में नाम

अंग्रेजी– स्पोगल सीड्स (Spogel seeds); गुजराती– ऊथमी जीरू; बंगाली– इसबगुल; लैटिन– प्लैण्टेगो ओवेटा (Plantago ovata); संस्कृत– अश्वगल, ईषद्गोल, अश्वकर्ण बीज; हिन्दी–ईसबगोल।

प्रयोज्य अंग

ईसबगोल के बीज एवं छिलका (भूसी) औषधि के रूप में प्रयुक्त होते हैं।

उत्पत्ति स्थान

इसकी खेती प्रायः शुष्क एवं उष्ण-कटिबन्धीय स्थानों में की जाती है।

वर्णन

यह डंठल रहित औषधि है। इसके पत्ते एक सीधी रेखा में और समान दूरी पर लगे होते हैं। ये पत्ते किनारों से नुकीले होते हैं। इसके फूल तथा फल एकदम ऊपर लगे होते हैं। बीजों का आकार नौका की तरह होता है। ये मुलायम, चिकने तथा रंग में पीलापन लिये भूरे होते हैं। इन बीजों पर एक लसीली सी भूसी लगी होती है, जो एक पतली और सफेद झिल्ली होती है। इस भूसी को कुचलकर (crushing) और फटककर (winnowing) बीजों से अलग किया जाता है। इन बीजों एवं भूसी की कटाई, मार्च-अप्रैल में की जाती है।

आयुर्वेद में, सर्वप्रथम ईसबगोल का वर्णन वैद्यराज मोरेश्वर द्वारा रचित ग्रन्थ 'वैद्यामृत' में मिलता है, जिसका समय 18 वीं शताब्दी का अन्त माना जाता है। इसके अनुसार, ईसबगोल ज्वरातिसार (ज्वर के साथ पतले दस्त आना) की चिकित्सा में बहुत उपयोगी है। इसके पश्चात्, बाद में अनेक ग्रन्थों, जैसे 'निघण्टु संग्रह', 'शालिग्राम निघण्टु' तथा 'आयुर्वेद विज्ञान' में इसका वर्णन मिलता है। इनके अनुसार, यह औषधि अनेक प्रकार की आंत सम्बन्धी बीमारियों में उपयोगी है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

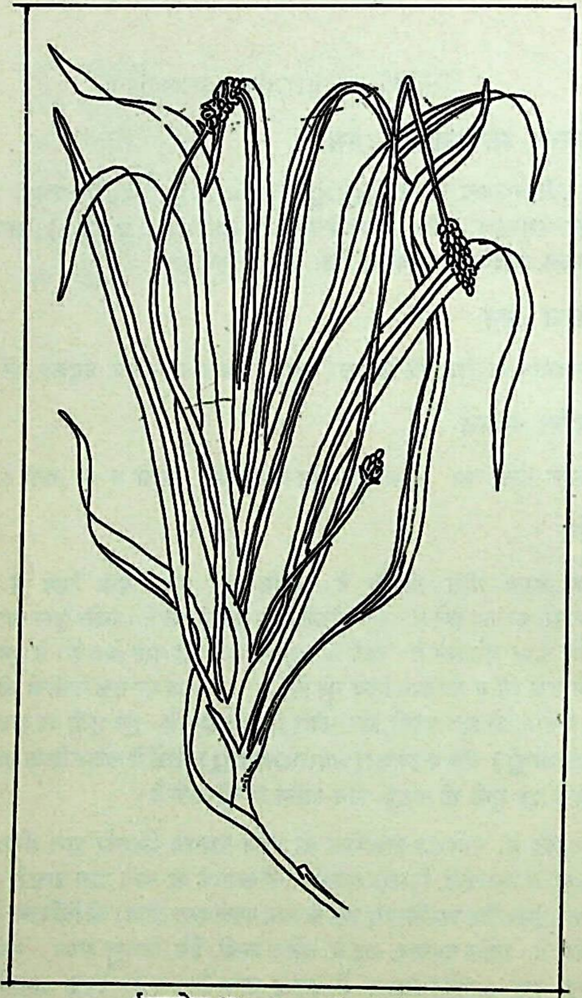

ईसबगोल (Plantago Ovata)

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

'ईसवगोल' पारसी भाषा का शब्द है, जो दो शब्दों से मिलकर बना है— 'अस्प'-जड़ी-बूटी तथा 'गोल'-'कान'। इसके अनुसार, ईसबगोल का अर्थ हुआ कि वह औषधि जिसका आकार कान जैसा है। ईसबगोल के बीज उभरे हुए(concave) तथा घोड़े के कान के सदृश लम्बे होते हैं। इस शब्दार्थ को दृष्टि में रखते हुए, संस्कृत भाषा में भी इस औषधि को 'अश्वकर्ण' कहा जाता है।

ईसबगोल एक कठोर एवं सख्त प्रकार की फसल है। इसकी खेती अलग-अलग प्रकार की भूमि पर की जा सकती है। शुष्क और चिकनी(loamy) उपजाऊ भूमि पर इसकी उपज बहुत अच्छी होती है। इसके लिए ठण्डा और शुष्क मौसम अनुकूल पड़ता है। फूल आने के समय वर्षा होना और आकाश में बादल छाये रहना इसके प्रतिकूल हैं। इससे गुणों और उपज की मात्रा-दोनों पर ही बुरा असर पड़ता है। इस औषधि की बुवाई अक्तूबर में की जाती है तथा जब तक यह पक नहीं जाती, तब तक पांच से आठ बार तक इसकी सिंचाई की जाती है। इसकी फसल तीन से साढ़े चार महीने तक कटाई के लिए तैयार हो जाती है। जब इसकी चोटियां(spikes) लाल हो जाती हैं, तो इन्हें हंसिये(sickle) की सहायता से, भूमि में लगभग 15 सेंमी. की ऊंचाई तक काट लिया जाता है। यह कटाई प्रायः प्रातः के समय ही करनी चाहिए, जब थोड़ी ओस रहती है। इसमें फसल को पीटने(threshing) के बाद उसे फैलाकर सुखाने(shedding) में सुविधा रहती है। बीजों को साफ करने के लिए इन्हें बार-बार फटका(winnow) व छाना जाता है।

ईसबगोल के बीज का महत्व इसके ऊपर के चिपचिपे(mucilaginous) छिलके अथवा भूसी के कारण ही होता है। यह एक पतली एवं सफेद झिल्ली सी होती है, जो बीज के उभरे हुए भाग को ढके रखती है। इस भूसी को बीज से अलग किया जाता है। अलग करने के लिए कुचलने (crushing) और फटकने (winnowing) की प्रक्रिया अपनाई जाती है। तब इस भूसी को गिरियों से अलग करके संभाल लिया जाता है।

ईसबगोल तीन प्रकार का होता है— 1) सफेद, 2) लाल, एवं 3) काला। इनमें सफेद रंग की भूसी वाला औषधि की दृष्टि से सर्वोत्तम माना जाता है। काला एवं भूरापन लिये काला निम्न कोटि का माना जाता है इसी कारण इसका प्रयोग प्रायः औषधि में नहीं किया जाता। लाल रंग वाले ईसबगोल का प्रभाव ठंडा होता है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

औषधीय गुण

ईसवगोल पौष्टिक, शीतल और मूत्रल (अधिक पेशाब लाने वाला) होता है। इसकी यह विशेषता है कि इसमें रेचक (दस्त लाने वाला) तथा विवन्धक (दस्त रोकने वाला) — दोनों ही प्रकार के गुण पाये जाते हैं। इसीलिए कब्ज और अतिसार— इन दोनों रोगों में ही इसका प्रयोग किया जाता है। इसके इस अलग-अलग प्रभाव को प्राप्त करने के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के अनुपानों के साथ इसका सेवन किया जाता है।

कब्ज, विशेषकर पुरानी कब्ज की चिकित्सा के अतिरिक्त अतिसार (diarrhoea), अमीविक पेचिश, पेट में अफारा, शरीर के किसी अंग से रक्तस्राव होना, जननांगों (genital tract) में किसी प्रकार का संक्रमण (infection) होना, ग्रहणी (sprue syndrome), पुराना आन्त्रशोथ (colitis) एवं वीर्यपात आदि रोगों की चिकित्सा में भी ईसवगोल का प्रयोग वहुत उपयोगी है। जव मूत्रोत्सर्जन में कठिनाई हो, मूत्र कम मात्रा में आता हो तथा साथ में जलन भी हो, तो ऐसी अवस्था में ईसवगोल के उपयोग से रोगी को वहुत लाभ मिलता है। वृहदान्त्र (colon) पर इसके अच्छे प्रभाव के कारण ही दमा की चिकित्सा में भी ईसवगोल के प्रयोग से अच्छा लाभ होता है। दमा में रोगी को वलगम या कफ (sputum) वाहर निकालने में वहुत कठिनाई होती है, परन्तु ईसवगोल को प्रतिदिन लेने से रोगी छाती में जमी वलगम आसानी से वाहर निकल सकता है। इसीलिए, कास और विशेषत: पुराने कास (chronic bronchitis) में ईसवगोल का वहुत अधिक प्रयोग किया जाता है।

वाह्य रूप से, इस औषधि का प्रयोग वच्चों के अण्डकोषों की सूजन (orchritis) में किया जाता है। इसके अतिरिक्त पुराने घावों (ulcers), सन्धिवात (rheumatism) से पीड़ित जोड़ों और शरीर के नाजुक अंगों में होने वाले फोड़े, फुंसियों आदि पर भी इसका लेप किया जाता है।

औषधि निर्माण एवं प्रयोग विधि

जैसा कि ऊपर वताया गया है कि ईसवगोल का प्रयोग अनेक प्रकार के रोगों में किया जाता है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें रेचक (laxative) और विवन्धक (constipative) — दोनों प्रकार के विरोधी गुण भी विद्यमान हैं। परन्तु इन

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

विभिन्न प्रकार के रोगों में इसका प्रयोग भिन्न-भिन्न प्रकार से किया जाता है। इनका संक्षिप्त उल्लेख नीचे किया जा रहा है—

पुरानी कब्ज: इसमें ईसबगोल की भूसी बहुत उपयोगी है। इसके लिए एक से तीन चम्मच भूसी को लेकर लगभग चार औंस(120 मि.लि.) गुनगुने पानी में डालकर धीरे-धीरे हिलायें, जिससे यह चिपचिपा हो जाएगा। इसमें, स्वाद के लिए चीनी अथवा गुड़ मिलाकर रोगी को दिन में दो या तीन बार पिलायें। यदि रोगी इस तरह का चिपचिपा पदार्थ न पीना चाहे, तो वह ईसबगोल की भूसी को ऐसे ही सूखे रूप में मुंह में डालकर ऊपर से गर्म पानी पी सकता है। इस प्रकार लेने से यह जीभ और तालु में चिपक जाता है और कुछ असुविधा होती है। ऐसी स्थिति में, एक अन्य विधि यह है कि ईसबगोल को चीनी या गुड़ के साथ गर्म पानी में घोलकर चिपचिपा होने से पहले ही घोलकर रोगी को पिला दें।

यह ईसबगोल आंत की श्लेष्मल झिल्ली को ढक लेता है तथा इससे पुरीष की मात्रा भी बढ़ती है। इसके अतिरिक्त यह बड़ी आंत में स्थित विषाणुओं(toxins) और जीवाणुओं(bacterias) के साथ मिल जाता है तथा शरीर की स्वाभाविक यान्त्रिक क्रिया के द्वारा जब आंतों में गति होती है, तो इसके परिणाम स्वरूप रोगी को पुरीषत्याग की इच्छा होती है। इस प्रकार ये हानिकारक जीवाणु भी पुरीष के साथ बाहर निकल जाते हैं।

ईसबगोल को गर्म दूध के साथ लेने से कब्ज में अपेक्षाकृत अधिक लाभ होता है। यह बहुत मृदु रेचक(mild laxative) है तथा इसका प्रभाव आंतों की क्रियाशीलता पर होता है, अतः इसके सेवन से अधिक एवं पतले दस्त आने का भय नहीं होता। यह आंत की दीवारों में संक्षोभ(irritation) भी उत्पन्न नहीं करता। इसके प्रयोग से एक या दो बार में रोगी का पेट साफ हो जाता है। यदि रोगी की आंत में वायु अथवा श्लेष्मा जमा हो, तो शुरू के कुछ दिनों में उसे बार-बार मल त्याग के लिए जाना पड़ सकता है।

ईसबगोल की एक विशेषता यह भी है कि इसके प्रयोग से रोगी को इसकी आदत नहीं पड़ जाती अर्थात् ऐसा नहीं होता कि यह औषधि लेते रहने से ही पेट साफ होता रहे और जब रोगी इसका प्रयोग छोड़ दे, तो पुनः कब्ज हो जाए। यदि वह ईसबगोल लेना बन्द भी कर देता है, तो भी उसका पेट अच्छी तरह साफ़ होता रहेगा। ईसबगोल

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

लेने के लगभग बारह घंटे बाद रोगी पुरीष त्याग कर पाता है। इससे आंत की नाड़ियों (nerves) में किसी प्रकार की उत्तेजना उत्पन्न नहीं होती, अतः बच्चों और गर्भवती स्त्रियों को भी बिना किसी डर के दिया जा सकता है।

II. **बवासीर**— ईसबगोल की भूसी सूखी एवं खूनी— दोनों प्रकार की बवासीर के लिए बहुत उपयोगी है। यह कब्ज को दूर करता है, यकृत् में जमे हुए रक्ताधिक्य (congestion) को दूर करता है, पुरीष को मुलायम तथा अच्छी तरह बद्ध करता है। पुरीष के मुलायम होने के कारण बवासीर के मस्सों में घर्षण आदि भी नहीं होता। इसके ठण्डे प्रभाव के कारण रक्तस्राव भी बन्द हो जाता है तथा मस्सों के घाव भी भर जाते हैं। इस उद्देश्य के लिए, दो चम्मच ईसबगोल की भूसी मट्ठा (butter-milk) अथवा नींबू के शरबत में मिलाकर रोगी को देनी चाहिए। यह औषधि एक महीने तक, दिन में तीन बार सेवन करानी चाहिए। बवासीर की प्रारम्भिक स्थिति में, दो चम्मच ईसबगोल दिन के समय गर्म जल के साथ देनी चाहिए। इससे रोग की चिकित्सा तो होती ही है, इसके साथ-साथ स्वस्थ मनुष्य भी बवासीर के आक्रमण से बचा रहता है।

III. **अमीबिक पेचिश**: रोग की इस स्थिति में रोगी बार-बार कब्ज एवं अतिसार (diarrhoea) का शिकार होता रहता है। प्रायः रोगी के पुरीष में श्लेष्मा अथवा आंव होती है और एक या दो बार में उसका पेट भी पूरी तरह साफ नहीं हो पाता। इस कारण उसके पेट में मरोड़ पड़ती हैं। ऐसी स्थिति में, रोगी को ऊपर बताई गई विधि के अनुसार केवल गर्म जल के साथ ईसबगोल का सेवन कराना चाहिए, दूध के साथ नहीं देना चाहिए। यदि अतिसार अर्थात् पतले दस्त आ रहे हों, तो ईसबगोल का छिलका ठण्डे पानी के साथ देना चाहिए। यदि इसमें एक चम्मच नींबू का रस मिला लिया जाए तो अधिक लाभकारी रहेगा।

यदि रोगी पुरानी तरह की अमीबिक पेचिश से परेशान है, तो ईसबगोल के दो चम्मच छिलके में एक चम्मच इन्द्रजौ का चूर्ण मिलाकर देना चाहिए। यह औषधि रोगी को दिन में दो या तीन बार करके आठ सप्ताह तक लेनी चाहिए। इसके सेवन से रोगी की आंतों में इस प्रकार का वातावरण बन जाता है, जिसमें पेचिश के कारणभूत जीवाणु पनप नहीं पाते, वे मर जाते हैं। परन्तु इसके विपरीत लाभकारी जीवाणुओं को किसी प्रकार का नुकसान नहीं पहुंचता।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

IV. बैसिलिअरी पेचिश(Bacilliary dysentery) : इस स्थिति में रोगी को बार-बार पतले दस्त आते हैं, जिसके कारण उसके शरीर में निर्जलीकरण (dehydration) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। ऐसी अवस्था में, रोगी को दो-दो चम्मच ईसबगोल का छिलका, दिन में चार बार ठण्डे पानी या नींबू के शरबत के साथ देना चाहिए। रोग की इस स्थिति में, ईसबगोल का छिलका आंत की अन्दर की दीवार पर पतली-सी परत(coating) बना देता है। परन्तु इससे किसी तरह की हानि व रोगी को असुविधा नहीं होती बल्कि लाभ होता है। इससे सूजन वाले स्थान में आराम मिलता है तथा घाव भर जाते हैं। इसके अतिरिक्त यह ईसबगोल दण्डाणुओं (bacillies) और इसके विषाणुओं के साथ मिल जाता है और धीरे-धीरे ये बाहर निकल जाते हैं।

ईसबगोल बृहदान्त्र की दीवारों पर चिकना प्रभाव डालता है, इससे पतले दस्त एवं बार-बार दस्त आने बन्द हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त, रोग के दूसरे लक्षण, जैसे दर्द होना, पेट में अफारा पड़ना, भूख न लगना एवं अरुचि आदि भी ईसबगोल के प्रयोग से ठीक हो जाते हैं।

V. पुराना बृहदन्त्रशोथ(Chronic colitis) : जब छोटी और बड़ी आंत की भीतरी दीवारों में सूजन और घाव हो जाते हैं, तो व्यक्ति आन्त्रशोथ का रोगी कहलाता है। इस रोग में, कुछ भी खाने के बाद, यहां तक कि एक प्याला पानी पीने के बाद भी रोगी को मलत्याग की आवश्यकता अनुभव होती है। इस तरह के रोगी को दिन में तीन या चार बार, दो-दो चम्मच ईसबगोल का छिलका मट्ठा(butter milk) या दही के साथ देना चाहिए। स्वाद के लिए, इसमें थोड़ा शहद या नमक और जीरे का चूर्ण मिला लेना चाहिए। इसके सेवन से आंतों के सूजन एवं घाव वाले भाग भर जाते हैं। रोगी नियमित रूप से पुरीष का त्याग करने लगता है तथा उसके पेट के अफारे और अरुचि में भी आराम मिलता है।

VI. पर्वतीय अतिसार(Hill diarrhoea) : समशीतोष्ण एवं ठण्डे जलवायु में रहने वाले लोग जब उष्ण कटिबन्ध(tropical) के पहाड़ों पर घूमने के लिए जाते हैं, तो प्रायः उन्हें दस्त(diarrhoea) शुरु हो जाते हैं। इस तरह के रोगियों को दो-दो चम्मच ईसबगोल का छिलका ठण्डे जल या मट्ठे(butter milk) के साथ दिन में दो बार देना चाहिए। इससे उसके रोग में आराम मिलता है तथा भविष्य में वह रोग के आक्रमण से भी बचा रहता है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

VII. **शिशुओं में कब्ज:** जब छोटे बच्चों को कब्ज हो जाए, तो उन्हें ¼ चम्मच ईसबगोल का छिलका दूध और चीनी में मिलाकर, दिन में दो बार देना चाहिए। जब कब्ज ठीक हो जाए, तब बचाव के तौर पर यह औषधि कुछ दिन तक दिन में एक बार देते रहें।

VIII. **गर्भवती महिलाओं में कब्ज:** गर्भावस्था में गर्भाशय का भार बड़ी आंत (colon) पर पड़ता है, इससे अधिकतर स्त्रियों में कब्ज की शिकायत हो जाती है। कभी-कभी कब्ज के साथ-साथ अतिसार(diarrhoea) भी हो जाता है। इन दोनों ही स्थितियों में ईसबगोल का छिलका बहुत उपयोगी है। यह औषधि नाड़ी-संस्थान (nervous system) पर किसी प्रकार का कुप्रभाव नहीं डालती। कब्ज में ईसबगोल का छिलका हल्के गर्म जल या हल्के गर्म दूध के साथ देना चाहिए तथा अतिसार में यह ठण्डे जल या मट्ठे (buter milk) के साथ देना चाहिए।

IX. **गुर्दे के रोग (Kidney diseases):** जब ईसबगोल को किसी ठण्डे अनुपान से लिया जाता है, तो यह शरीर पर विशेष रूप से शीतल प्रभाव डालता है। यह गुर्दों की कार्यक्षमता को भी बढ़ाता है, जिससे मूत्र ठीक तरह से और पर्याप्त मात्रा में आता है। यदि ईसबगोल इसी उद्देश्य से लेना हो तो इसे नींबू के शरबत या ठण्डे जल की पर्याप्त मात्रा के साथ लेना चाहिए। इस जल अथवा शरबत में 2 ग्रा. 'श्वेत पर्पटी' (नवसादर से तैयार की गई औषधि) भी अच्छी तरह मिला लेनी चाहिए।

X. **शरीर के विभिन्न अंगों से रक्तस्राव:** यदि किसी व्यक्ति के नाक, गले, अथवा मूत्राशय में रक्तस्राव होता है या कोई स्त्री रक्तप्रदर(menorrhaga) से पीड़ित है, तो उसे ईसबगोल का छिलका दो या तीन चम्मच की मात्रा में, दिन में दो से तीन बार नींबू के शरबत या मट्ठे (butter milk) के साथ देना चाहिए। क्योंकि ठण्डा होने के कारण, ईसबगोल इन रोगों में रक्तस्राव को रोक देता है।

XI. **वीर्यपात (Spermatorrhoea):** यह युवकों की एक सामान्य बिमारी है। ऐसे रोगियों को दिन में दो बार ठण्डे पानी के साथ दो-दो चम्मच ईसबगोल का छिलका देना चाहिए। इस प्रकार की शिकायत से बचने के लिए दो-दो चम्मच ईसबगोल छिलका रात को सोते समय ठण्डे जल या किसी अन्य ठण्डे पेय से लेना चाहिए।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

XII. **कास एवं दमा:** दमा एवं कास (bronchitis) के रोगी को, विशेषत: जब वह वातस्फीति (emphysema) से भी पीड़ित होता है, तो बलगम निकालने में बहुत कठिनाई होनी है। ऐसी स्थिति में, रोगी को दो चम्मच ईसबगोल छिलका गर्म जल या गर्म दूध में एक चम्मच सौंफ का चूर्ण मिलाकर देना चाहिए। इससे रोगी की थूक एवं बलगम आसानी से बाहर निकल आती है।

बाह्य प्रयोग

जोड़ों के रोगों में, जब जोड़ों में सूजन और दर्द हो, खासकर बड़े जोड़ों में, तो ईसबगोल की पुल्टिस बांधने से बहुत लाभ मिलता है। पुल्टिस बनाने के लिए, ईसबगोल के छिलके में गर्म जल मिलाकर लुगदी-सी (paste) बना लेनी चाहिए। फिर इसको इतना गर्म कर लें, जितना आसानी से सहा जा सके। इस लेप को दर्द व सूजन वाले अंग पर लगाकर ऊपर से पट्टी बांध दें। लगभग बारह घंटों के बाद ही खोलें।

औषधि निर्माण विधि

नीचे औषधीय दृष्टि से उपयोगी ईसबगोल के प्रमुख योगों को तैयार करने की विधियां बताई जा रही हैं:

I. चूर्ण

दो भाग ईसबगोल का छिलका और एक-एक भाग बड़ी इलायची और धनियां लेकर चूर्ण कर लें। इस चूर्ण को दो से छ: ग्राम की मात्रा में प्रतिदिन दो या तीन बार गर्म जल या गर्म दूध के साथ रोगी को दें। इसके सेवन से बुखार के साथ दस्त (diarrhoea) होना, अमीबिक पेचिश (amoebic dysentery), खूनी बवासीर, शरीर के किसी अंग से रक्तस्राव, मूत्र-त्याग में दर्द होना तथा कब्ज जैसे रोगों में लाभ मिलता है। अतिसार में, यह चूर्ण ठण्डे जल या मट्ठे के साथ देना चाहिए।

II. पेया

40 ग्रा. ईसबगोल को रात में 200 मि.लि. जल में भिगोकर रख दें। प्रात: काल इसे अच्छी तरह छान लें और 20 ग्रा. मिश्री इसमें मिला लें। रक्तस्राव, सिरदर्द,

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

अतिसार, मरोड़ का दर्द (griping pain) तथा पेट में जलन होने पर इसे पीने से आराम मिलता है।

III. शरबत

25 ग्रा. ईसबगोल को 300 मि.लि. पानी में भिगो दें। जब यह चिपचिपा हो जाए, तो इसमें 400 ग्रा. मिश्री मिलाकर धीमी आंच पर पकायें। यह शरबत तैयार हो जाएगा। इसे सूखी और साफ कांच की बोतल में भर कर रख दें। यह कास और दमा के रोगी के लिए बहुत लाभदायक है। इसका सेवन 10–20 मि.लि. की मात्रा में प्रतिदिन दो या तीन बार करना चाहिए।

IV. लप्सी

सालम मिश्री का चूर्ण 3 ग्रा. की मात्रा में लेकर 60 ग्रा. ईसबगोल के छिलके के साथ मिला लें। इन दोनों को 200 मि.लि. दूध के साथ उबाल लें और इसमें थोड़ी चीनी मिला लें। उबालने से जब यह कुछ गाढ़ा (semi-solid) हो जाए तो उतार लें। यह एक चम्मच की मात्रा में दिन में दो बार दूध के साथ दें। इसके प्रयोग से वीर्यपात (spermatorrhoea), श्वेत प्रदर (leucorrhoea) तथा वीर्य सम्बन्धी अन्य रोगों में लाभ मिलता है।

V. खीर

10 ग्रा. ईसबगोल को 200 मि.लि. गाय के दूध के साथ उबालें। इसमें स्वादानुसार कुछ चीनी मिला लें। मूत्र-सम्बन्धी रोग होने पर, यह खीर रोगी को प्रातः -काल देनी चाहिए। इसका सेवन कम से कम एक मास तक अवश्य करना चाहिए।

VI. पाक (लेह)

500 ग्रा. ईसबगोल को तीन लि. गाय के दूध में पकायें। जब जलीय अंश सूख जाए, तो इसमें आधा लि. गाय का घी डालकर भून लें। इस मिश्रण में 20 – 20 ग्रा. सोंठ, काली मिर्च, हरड़, बहेड़ा और दालचीनी का चूर्ण मिला लें। फिर इसमें चीनी की चाशनी मिलाकर पकायें। जब यह कुछ गाढ़ा (semi-solid) हो जाए, तो उतार लें। यह लेह 20 ग्रा. की मात्रा में रोगी को खाली पेट, दिन में दो बार दें। इसके सेवन

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

से पुरानी पेचिश तथा शरीर के किसी अंग से रक्तस्राव में आराम मिलता है तथा शरीर पुष्ट होता है।

कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण योग

(क) ईसवगोल का छिलका और बीहिदाना— दोनों बराबर-बराबर लेकर पानी में भिगो दें। इसमें दोगुनी मिश्री मिलाकर रोगी को दिन में तीन बार दो-दो चम्मच की मात्रा में दें। इससे रक्तस्राव, मरोड़ तथा अतिसार में लाभ मिलता है। यदि यह औषधि गर्म दूध या गर्म जल से ली जाए, तो कब्ज दूर होती है।

(ख) ईसबगोल, तुख्मलंग, मुलहठी, उन्नाव, धातकी (धाय) तथा इन्द्र जौ– प्रत्येक15–15 ग्रा. लेकर400 मि.लि. जल के साथ पकायें। जब एक चौथाई शेष रह जाए, तो5 ग्रा. मिश्री मिलाकर रोगी को प्रातः और सांय20 मि.लि. सौंफ या पुदीना के अर्क के साथ दें। यह योग कब्ज, खूनी बवासीर और पुरानी पेचिश में बहुत उपयोगी है।

(ग) 6 ग्रा. ईसबगोल का छिलका 20 मि.लि. परिष्कृत (refined) एरण्ड का तेल और100 मि.लि. गाय का गर्म दूध आपस में मिला लें। यह मिश्रण रोगी को प्रातः काल पिलायें। इससे कब्ज एवं पेचिश दूर होती है।

(घ) 100 ग्रा. ईसबगोल के छिलके में 150 मि.लि. बादाम रोगन मिलाकर प्रातः काल रोगी को गर्म दूध या गर्म पानी के साथ दें। इससे शूल(colic pain) तथा कब्ज में आराम मिलता है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

एरण्ड (Castor Oil Plant)

विभिन्न भाषाओं में नाम

अंग्रेजी– केस्टर ऑयल प्लाण्ट (Castor oil plant); उड़िया– भेरोण्टा, चित्रोको, गोवो; उर्दू– एरण्ड; कन्नड़– हरलु; गुजराती– एरण्डो, एरण्डियो; तमिल– आगणक्कु, अट्टमानम्, चित्तमणि; तेलुगु– आमुदमु, चिट्टमुदमु, एरामुडपु; पंजाबी– एरण्ड; बिहारी– अण्ड; बंगाली– भेरेण्डा; मराठी– एरण्डी; मलयालम– आमण्डम्, आवणक्कु, तकम्; लैटिन– रिसिनस कॉम्युनिस (Ricinus communis); सिन्धी– हेरन्; संस्कृत– एरण्ड, गन्धर्वहस्त, पंचांगुल; हिन्दी– रेंडी, एरण्ड, अण्डी।

प्रयोज्य अंग

एरण्ड की पत्तियां, जड़, बीज तथा तेल दवाई में काम आते हैं।

उत्पत्ति स्थान

यह जंगली रूप में बढ़ने वाला पौधा है। इसकी खेती भी की जाती है। यह उष्ण-कटिबन्ध, उसके आस-पास के स्थानों एवं समशीतोष्ण जलवायु वाले स्थानों में, समुद्र तल से 2000 मी. तक की ऊंचाई में पाया जाता है।

वर्णन

यह सारा साल उगने वाला तथा बारह महीने रहने वाला पौधा है। प्रायः यह घनी झाडियों के रूप में फैलता है, परन्तु यह एक छोटे पौधे के रूप में भी बढ़ता है। इसकी ऊंचाई 6 मी. तक होती है तथा इसकी लकडी बहुत मुलायम होती है। एरण्ड के पत्तों का घेरा 30 सें.मी.—60 सें.मी. होता है। ये पत्ते गोल तथा 5 से 10 भागों में बंटे होते हैं। इनका रंग हरा अथवा थोड़ा लालिमा लिए हुए हरा होता है। एरण्ड के फूल 30 सें.मी.—60 सें.मी. की ऊंचाई में आते हैं। फल एक पतली-सी झिल्ली में ढके

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

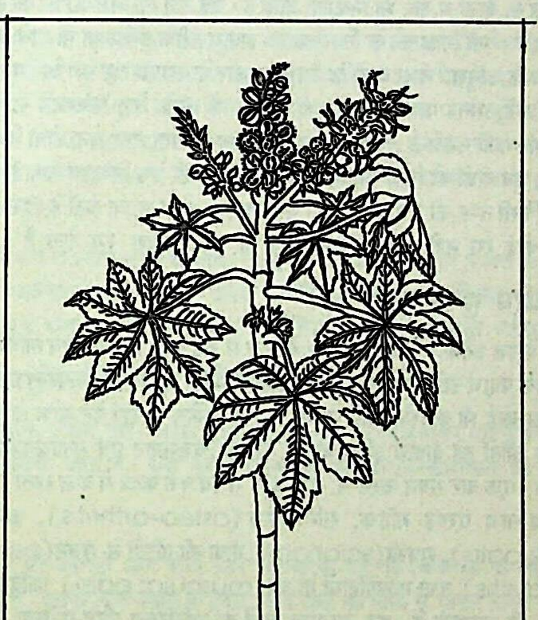

एरण्ड (Ricinus Communis)

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

होते हैं, जिस पर बाहर की ओर निकले हुए मुलायम से कांटे लगे रहते हैं। इसके बीजों का रंग तथा माप अलग-अलग होता है, जिनके ऊपर एक सख्त-सा छिलका लगा होता है। ये बीज चिकने, मुलायम तथा अण्डाकार होते हैं।

एरण्ड के बीजों से तेल भी निकाला जाता है। यह तेल लगभग 40% की मात्रा में निकलता है। तेल निकालने के लिए अलग-अलग तरीके इस्तेमाल में लाये जाते हैं। इस विधि के अनुसार तथा बीजों के रंग व आकार के आधार पर तेल के रंग, गन्ध व स्वाद में भी अन्तर पाया जाता है। बीजों को गर्म करके तेल निकालने से, तेल में कड़वी-सी गन्ध आती है तथा यह तेल रंग में कुछ गाढ़ा तथा घना होता है। इसके विपरीत, जब बीजों को बिना गर्म किये, शीत विधि से ही तेल निकाला जाता है, तो इस तेल में किसी तरह की गंध नहीं होती। यह स्वाद में थोड़ा कड़वा होता है। इस तेल का या तो कोई रंग नहीं होता अथवा पीला या हल्का पीला रंग होता है। ।

औषधीय गुण

एक रेचक औषधि(laxative) के रूप में यह बहुत प्रचलित एवं लोकप्रिय है। कुछ रेचक पदार्थ आंतों पर शुष्क प्रभाव डालते हैं तथा भारी होते हैं। परन्तु एरण्ड इस प्रकार का कोई भी कुप्रभाव नहीं डालता। इसके प्रयोग से जहां पेट साफ़ हो जाता है, वहां यह आंतों की दीवारों और किनारों पर भी चिकनाहट एवं मुलायमपन बनाये रखता है। एक बार सेवन करने से, रोगी बहुत समय तक कब्ज से बचा रहता है। कब्ज के साथ-साथ एरण्ड गठिया, सन्धि-शोथ (osteo–arthritis), कटि पीड़ा (back pain), गृध्रसी(sciatica), ग्रीवा की हड्डियों में सूजन(cervical spondylitis) तथा मांसपेशियों के दर्द(muscular pain) आदि जोड़ों के रोगों में भी उपयोगी है। इन उपरोक्त रोगों के अतिरिक्त फोड़े-फुंसियां एवं घाव (ulcers), नेत्र रोग, शूल, पेट में अफारा एवं ज्वर होने पर तथा मासिक-धर्म सम्बन्धी समस्याओं की चिकित्सा में भी एरण्ड का प्रयोग किया जाता है। अनेक प्रकार के रोग, वायु अर्थात् नाड़ी-संस्थान(nervous system) में गड़बड़ के कारण ही होते हैं। इनमें भी अधिकतर बीमारियों में रोगी कब्ज से पीड़ित रहता है। इसीलिए, वायु के रोगों, जोड़ों के रोगों और मासिक धर्म सम्बन्धी समस्याओं में प्रयुक्त होने वाली प्रायः सभी दवाओं में एरण्ड का तेल डाला जाता है। इन दवाओं में अधिकतर कच्चा एरण्ड का तेल(raw castor oil) ही डाला जाता है। परन्तु इस तेल के प्रयोग से पेट में

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

बहुत अधिक मरोड़ पड़ती है तथा तीव्र रेचक होने से रोगी को अनेक बार मल त्याग करना पड़ता है। अत: आजकल औषधिनिर्माता इन दवाओं में शुद्ध एवं परिष्कृत किया (refined) हुआ तथा गन्धरहित (deodorised) तेल (जो कैमिस्टों के यहां मिलता है) ही डालते हैं।

जब एरण्ड का कच्चा तेल ही प्रयुक्त करना हो, तो इसके साथ ½ चम्मच (2.5 ग्रा.) अजवायन का चूर्ण भी रोगी को खिला देना चाहिए। इससे पेट में मरोड़ एवं दर्द नहीं होती। भारत के कुछ भागों में नवजात शिशुओं को एक या दो बूंदें एरण्ड के कच्चे तेल (raw castor oil) की दी जाती हैं। इससे उनके शरीर का मल तो साफ होता ही है, इसके साथ-साथ, भविष्य में स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है और रंग भी साफ़ होता है।

बाहरी रूप से प्रयोग करने के लिए, सूजन एवं दर्द वाले जोड़ों पर एरण्ड के तेल की धीरे-धीरे मालिश करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त, इसके जड़ की छाल का कल्क (paste) बनाकर, दर्द वाले जोड़ पर पुल्टिस की तरह लगाना चाहिए।

औषधि निर्माण एवं प्रयोग विधि

एरण्ड का प्रयोग चूर्ण, स्वरस (juice), काढ़ा व तेल बनाकर एवं दूध के साथ पकाकर किया जाता है। इन्हें तैयार करने की विधियां निम्नलिखित हैं:

चूर्ण

एरण्ड की जड़ की छाल जोड़ों और पेशियों के दर्द की चिकित्सा के लिए बहुत उपयोगी है। इसका चूर्ण बनाने के लिए पहले छाल को पानी से धोकर साफ कर लें। फिर छोटे टुकड़ों में काट लें, धूप में सुखायें और चूर्ण बना लें।

काढ़ा

एरण्ड की जड़ की छाल अथवा ज़ड़ का चूर्ण एक चम्मच (5 ग्रा.) लेकर, चार प्याले जल के साथ उबालें। जब एक-चौथाई रह जाए तो छानकर चूर्ण फेंक दें। यह काढ़ा दिन में तीन बार पीना चाहिए। स्वाद में कसैला होने के कारण, इसमें गुड़ अथवा चीनी थोड़ी मात्रा में मिला लेनी चाहिए।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

तेल

एरण्ड के बीजों का कच्चा व शुद्ध तेल तीव्र रेचक(strong purgative) है। इसलिए इसकी केवल 5 बूंदें ही दूध के साथ देनी चाहिए। परिष्कृत(refined) एवं गन्धरहित(deodorised) तेल कम रेचक होता है। अतः इसे अधिक मात्रा में दिया जा सकता है। इस तेल के प्रयोग से कब्ज दूर होने के साथ-साथ जोड़ों, पेशियों और कण्डराओं(tendons) की सूजन एवं दर्द भी ठीक होता है।

दुग्धपाक

इसके बीजों की गिरी निकालकर पीस लें। फिर एक प्याले दूध और चार प्याले जल में तीन चम्मच(15 ग्रा.) यह कल्क(paste) मिलाकर उबालें। जब एक प्याला दूध शेष रह जाए, तो उतार कर छान लें। इस दूध में काफी मात्रा में चीनी मिलाकर पिलायें। यह दिन में दो बार देना चाहिए। बहुत अधिक रेचक होने के कारण, रोगी के अनुसार इसकी मात्रा कम व अधिक की जा सकती है।

बाह्य प्रयोग के लिए, एरण्ड के पत्ते की सीधी तरफ थोड़ा एरण्ड का तेल लगा दें। इस पत्ते को आग के ऊपर गर्म करके दर्द वाले स्थान पर रख दें। इसके ऊपर एक पट्टी बांधकर लगभग आठ घंटों तक रहने दें। इसी तरह तेल को गुनगुना करके, दर्द वाले अंग पर धीमी-धीमी मालिश करनी चाहिए।

मात्रा

चूर्ण

एक-एक चम्मच(5 ग्रा.), दिन में तीन बार गर्म दूध के साथ दें।

काढ़ा

6 चम्मच(30 मि.लि. या एक औंस) दिन में दो बार दें।

तेल

कच्चा तेल(raw castor oil),5 बूंदों की मात्रा में एक प्याला गर्म दूध के साथ देना चाहिए। कड़वे स्वाद एवं गन्ध के कारण, कुछ रोगियों का जी मिचलाने लगता है

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

तथा उल्टी भी हो सकती है। इससे बचने के लिए, गर्म दूध में चीनी एवं इलायची का चूर्ण मिला लेना चाहिए। परिष्कृत (refined) किया हुआ तेल 12 चम्मच (2 औंस) की मात्रा में गर्म दूध के साथ मिलाकर देना चाहिए।

योग

(i) एरण्ड पाक;
(ii) एरण्डमूलादि क्वाथ;
(iii) एरण्ड सप्तक क्वाथ।

टिप्पणी

एरण्ड का कच्चा तेल (raw castor oil) तीव्र रेचक है। अत: यह गर्भवती महिलाओं को नहीं देना चाहिए। यदि आवश्यकता पड़े, तो बहुत ही कम मात्रा में दें।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

ग्वारपाठा अथवा कुमारी (Aloe)

विभिन्न भाषाओं में नाम

अंग्रेजी– इण्डियन एलो (Indian aloe); उड़िया– घीकुआंर, घृतकुमारी; उर्दू– घीक्वार; गुजराती– कुंवार, कडवीकुंवार; तमिल– काट्टोली, अंगिनी; तेलुगु– घुसमसरम्, छिन्नकलबन्द, कलबन्द; पंजाबी– कुवारगंदल; बंगाली– घृतकुमारी; मराठी– कोरफड; मलयालम– घृतकुमारी, कट्टल; लैटिन– एलो बारबडेन्सिस (Aloe barbadensis); संस्कृत– कुमारी, घृतकुमारिका, अदला, अफला; हिन्दी– घीकुआंर, ग्वारपाठा :

प्रयोज्य अंग

ग्वारपाठा के पत्तों के गूदे को औषधि के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

उत्पत्ति स्थान

यह पौधा उष्ण-कटिबन्ध एवं उसके आस-पास के इलाकों तथा समशीतोष्ण जलवायु वाले स्थानों में जंगली रूप में पाया जाता है। इन स्थानों में इसकी खेती बगीचों में भी की जाती है। रेतीली भूमि में यह बहुत अच्छी तरह फैलता है।

वर्णन

यह एक बौना झाड़ीनुमा पौधा है, जिसकी पत्तियां गूदेदार होती हैं। इसका तना 30 सें.मी.—60 सें.मी. ऊंचा होता है। इसके पत्ते लगभग 15" लम्बे, 4" चौड़े तथा ¾" मोटे होते हैं। ये गूदेदार पत्ते किनारों से नुकीले व कांटेदार होते हैं। यदि इस पत्ते को काटकर उल्टा लटका कर रखा जाए, तो इसमें से पीला सा रस टपकता है। इस रस को इकट्ठा करके सूर्य की धूप में अथवा आग पर गर्म करके सुखा लिया जाता है। यह एक ठोस सा पदार्थ बन जाता है, जिसे 'मुसब्बर' कहते हैं। इसका रंग कालापन लिये भूरा होता है। प्रायः इसी का प्रयोग औषधियों में किया जाता है।

शीत ऋतु के अन्त में, इसमें लाल रंग के फूल गुच्छों में निकलते हैं।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

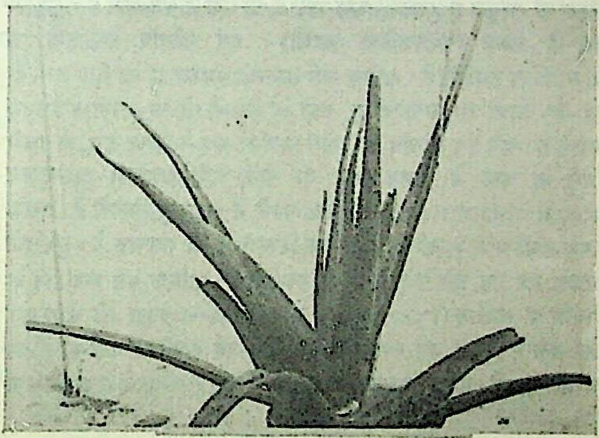

ग्वारपाठा (Alse Barbadensis)

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

औषधीय गुण

कुमारी का प्रयोग पुरानी कब्ज, बवासीर, पेट में गैस बनना, भूख न लगना, पीलिया तथा स्त्री रोगों, जैसे मासिक धर्म में अनियमितता, दर्द होना, श्वेतप्रदर(स्त्री के जननांग से बदबूदार पानी निकलना) आदि रोगों की चिकित्सा में किया जाता है।

बाह्य रूप से इसका प्रयोग जलने पर एवं मोच आदि आने पर किया जाता है।

ग्वारपाठा को संस्कृत में 'कुमारी' कहा जाता है, जो एक सार्थक नाम है। 'कुमारी' का अर्थ है कन्या (अविवाहिता लड़की)। यह औषधि लड़कियों की युवावस्था में विशेष उपयोगी है। मासिक-धर्म सम्बन्धी समस्याओं को ठीक करने के अतिरिक्त यह उनका रंग निखारती है, चेहरे के मुंहासों को दूर करती व प्रजनन शक्ति बढ़ाती है। यदि इस औषधि का प्रयोग नियमित रूप से किया जाए, तो इससे मासिक-धर्म के चक्र में समय-समय पर होने वाले हार्मोनल असन्तुलन (harmonal imbalance) को ठीक करने में सहायता मिलती है। इसके साथ ही यह हार्मोन्स से सम्बन्धित मानसिक विकास में भी सहायक है। युवतियों के अतिरिक्त, यह प्रौढ़ औरतों के लिए भी उपयोगी है। मासिक-धर्म बन्द होने के समय, स्त्रियों में हार्मोन्स (hormons) सम्बन्धी अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। उन्हें कई प्रकार की शारीरिक एवं मानसिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। परन्तु ग्वारपाठा के प्रयोग से वे इन समस्याओं से छुटकारा पा सकती हैं।

औषधि निर्माण एवं प्रयोग विधि

पुरानी कब्ज, बवासीर, भूख न लगना, पेट में गैस बनना तथा श्वेतप्रदर के लिए रोगी को कुमारी का रस अथवा गूदा देना चाहिए। यह रस स्वाद में कड़वा होता है, अतः इसमें थोड़ा नमक मिला लेना चाहिए। बच्चों के लिए, कुमारी के रस में समान मात्रा में शहद मिला लेना चाहिए अथवा थोड़ा गुड़ व चीनी भी मिलाया जा सकता है। पीलिया के रोगी को इस गूदे व रस में नमक न मिलाकर गुड़ या चीनी मिलाकर ही देना चाहिए।

जलने पर, पत्ते का गूदा निकालकर जले हुए स्थान पर लगाना चाहिए। गूदा निकालने के लिए, पत्ते के ऊपर का छिलका चाकू से उतार लेना चाहिए। फिर इस

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

गूदे को ओखली और मूसल(pestle and mortar) की सहायता में पेस्ट बना लें। अधिक गूददार होने के कारण, इसमें से रस निकालना कुछ कठिन होता है। अतः पहले इस पूरे पत्ते को आग के ऊपर सेक लें। इसके पश्चात्, गूदे को कपड़े में डालकर निचोड़ लें, इसमें आसानी से रस निकल आयेगा।

किसी अंग में मरोड़ व मोच आने पर, ग्वारपाठा के गूदे व रस को मोच वाले स्थान पर प्रतिदिन दो या तीन बार धीरे-धीरे मलना चाहिए।

योग

(i) कुमार्यासव;
(ii) कुमारी वटी;
(iii) रजः प्रवर्तिनी वटी;
(iv) कुमारी पाक।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

ज़मीकन्द (Elephant's Foot)

विभिन्न भाषाओं में नाम

अंग्रेजी–तेलुगु पोटैटो (Telugo potato), एलिफैण्ट्स फुट (Elephant's foot); गुजराती–सूरण; तमिल–करुला, करुनैकलंग; तेलुगु–मुष्णकन्द, कन्द; बंगाली–ओल; मराठी–सूरणं; लैटिन–एमोर्फोफैलस कैम्पेन्युलेटस (Amörphophallus campanulatus); संस्कृत–सूरण, अर्शोघ्न; हिन्दी–ज़मीकन्द, कन्द।

प्रयोज्य अंग

इस औषधि का कन्द दवाई के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।

उत्पत्ति स्थान

ज़िमीकन्द उष्ण-कटिबन्धीय स्थानों में जंगली रूप में बढ़ता है। सब्जी एवं दवाई के रूप में प्रयुक्त होने के कारण, इसकी खेती भी बहुतायत में की जाती है।

वर्णन

ज़मीकन्द का पौधा 30 सें.मी.—60 सें.मी. ऊंचा होता है। इसका कन्द ज़मीन के अन्दर रहता है। यह अर्धगोलाकार होता है तथा इसका ऊपरी भाग बीच में से धंसा होता है, जो एक डंठल से जुड़ा रहता है। इस कन्द का घेरा 8–10 " तक होता है तथा रंग हल्का भूरा होता है। एक कन्द 2–4 कि.ग्रा. तक भारी होता है। जंगली किस्म का ज़मीकन्द, खेती किये गये ज़मीकन्द की अपेक्षा छोटा होता है। दवाई के लिए जंगली किस्म का ज़मीकन्द अधिक उपयोगी होता है, परन्तु इसे खाने से गले व जीभ में संक्षोभ सा (irritation) होने लगता है। क्योंकि इस जंगली किस्म में कैल्शियम ऑक्सेलेट (calcium oxalate) अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में पाया जाता है, जबकि खेती किये ज़िमीकन्द में यह तत्व कम मात्रा में पाया जाता है। अतः यह कम

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

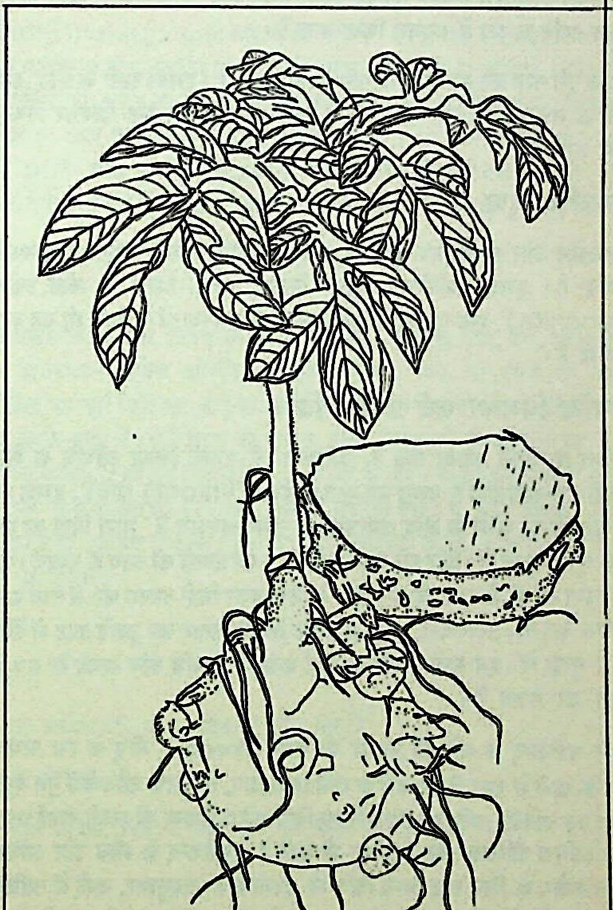

जमींकन्द (Amorphophallus Campanulatus)

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

संक्षोमक (Irritant) होता है। इसीलिए, इस किस्म के ज़मीकन्द को सब्जी एवं अचार आदि के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

पक पूरी तरह बढ़े हुए कन्द में गांठे सी निकलती हैं। इसकी खेती के लिए इन्हीं गांठों को मई-जून में बोया जाता है तथा बारह मास पश्चात इन्हें खोदकर निकाल लिया जाता है।

औषधीय गुण

बवासीर और पुरानी एवं साधारण कब्ज के लिए ज़मीकन्द बहुत ही गुणकारी औषधि है। इसके अतिरिक्त यकृत् विकार, शूल, आंतों में कीड़े, कास (bronchitis), दमा एवं मासिक-धर्म सम्बन्धी समस्याओं के लिए भी यह बहुत उपयोगी है।

औषधि निर्माण एवं प्रयोग विधि

जैसा कि पहले बताया गया है, ज़मीकन्द की जंगली किस्म औषधि के लिए अधिक लाभकारी होती है, परन्तु यह बहुत संक्षोमक (Irritant) होती है। इसके इस कुप्रभाव को दूर करने के लिए ज़मीकन्द के ऊपर लगभग 2" मोटा मिट्टी का लेप करके धूप में सुखा लें। फिर इसे गाय के गोबर से बने उपलों की आग में पकायें। जब मिट्टी लाल रंग की हो जाए, तो उसे आग से निकालकर मिट्टी अलग कर लें तथा पानी से साफ कर लें। तत्पश्चात्, चाकू से इसके छिलके उतार कर टुकड़े काट लें और धूप में सुखा लें। इन सूखे टुकड़ों का चूर्ण बनाकर औषधि और सब्जी के रूप में प्रयुक्त कर सकते हैं।

यदि जमीकन्द के कटे हुए टुकड़ों को कांजी (vinegar), नींबू के रस अथवा इमली के पानी में सात दिन तक पड़ा रहने दिया जाए, तो इसके औषधीय गुण बहुत अधिक बढ़ जाते हैं। यदि इस प्रकार तैयार किये गये जमीकन्द की सब्जी बनाई जाए, तो वह अधिक पौष्टिक और स्वादिष्ट भी होती है। ज़मीकन्द के शीघ्र और अधिक सुरक्षित प्रयोग के लिए एक अन्य विधि भी उपयोगी है। तदनुसार, पानी में अधिक मात्रा में इमली की पत्तियां डालकर ज़मीकन्द को उबाल लें। जब पूरी तरह से उबल जाए, तो इसके छिलके उतार लें और टुकड़े काटकर धूप में सुखा लें। इन टुकड़ों का चूर्ण बनाकर औषधियों में प्रयुक्त करना चाहिए।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

ज़मीकन्द की सब्जी बनाने के लिए, खेती किये गये कन्द के बाहरी छिलके उतार कर टुकड़े काट लें। इन टुकड़ों को घी या सरसों के तेल में तल लें। तलने से इनका संक्षोभक(irritating) असर समाप्त हो जाता है। तत्पश्चात्, स्वादानुसार मसाले आदि डालकर व छौंक लगाकर सब्जी बनायें। एक अन्य विधि के अनुसार, जिमीकन्द को पानी में कुछ कांजी या नींबू का रस डालकर उबाल लें। जब यह मुलायम हो जाए, तो छिलके उतार कर मसल लें। इस कल्क(paste) में नमक, मेथी और जीरा आदि डालकर छौंक लगा लें तथा परोसने से पहले थोड़ा नींबू का रस मिला लें। इस प्रकार तैयार की गई सब्जी कब्ज एवं बवासीर के रोगी के लिए बहुत लाभदायक है।

ज़िमीकन्द से तैयार किया एक अन्य नुस्खा, जो 'सूरण मोदक' के नाम से प्रसिद्ध है, नीचे दिया जा रहा है—

काली मिर्च, पिप्पली, चित्रक की जड़, हरड़, बहेड़ा, आंवला, जीरा, हींग, अजवायन और अजमोदा— प्रत्येक औषधि का चूर्ण एक-एक भाग लें। इसमें छः भाग ज़मीकन्द का चूर्ण मिलाकर, नींबू के रस की भावना दें। फिर इस सम्पूर्ण मिश्रण को मर्दन करके सुखा लें। इसी प्रकार की भावना, मर्दन एवं सुखाने की क्रिया को सात बार दोहराना चाहिए। फिर इस मिश्रण में से,3–3 ग्रा. के वजन की गोलियां बनाकर सुखा लें। इन्हें चीनी अथवा कांच के सूखे बर्तन में सुरक्षित रखें। ये 'सूरण मोदक' कब्ज, बवासीर तथा जठरान्त्र प्रणाली(gastro-intestinal tract) के रोगों में बहुत लाभ पहुंचाते हैं।

मात्रा

चूर्ण

एक चम्मच(5 ग्रा.), दिन में तीन बार दें।

सूरण मोदक

दो-दो मोदक, दिन में तीन बार गर्म पानी के साथ देने चाहिए।

योग

(i) सूरण मोदक;
(ii) बृहत् सूरण मोदक;

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

(iii) सूरण वटक;
(iv) वृहत् सूरण वटक:
(v) महासूरणाद्य लौह;
(vi) नित्योदित रस;
(vii) कांकायन मोदक;
(viii) पञ्चानन वटी।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

पपीता (Papaya)

विभिन्न भाषाओं में नाम

अंग्रेजी- पपाया (Papaya); उड़िया-अमृतमण्डा; गुजराती- पोपैयु; तमिल- पप्पलि; तेलुगु- बोप्पयी; पंजाबी- पपीता; बंगाली-पेपे; मराठी- पपाया, लैटिन- कैरिका पपाया (Carica papaya); संस्कृत- एरण्डकर्कटी; हिन्दी- पपीता।

प्रयोज्य अंग

इसके फल का प्रयोग औषधि के रूप में किया जाता है।

उत्पत्ति स्थान

प्रायः पपीता उष्ण-कटिबन्धीय एवं उसके समीप के उन स्थानों पर पाया जाता है, जहां वर्षा पर्याप्त होती है।

वर्णन

यह एक सीधा और कोमल पेड़ है, जो 3 मी. से 6 मी. तक ऊंचा होता है। इसके शिखर पर बड़े, गहरे एवं बीच में से फूले हुए पत्तों का मुकुट (crown) सा बना होता है। यह ताड़ के पेड़ के समान दिखाई देता है। पपीते के फल तने के एकदम ऊपर, पत्तों के मूल में सटे हुए होते हैं। फलों की संख्या, आकार एवं वजन भूमि के उपजाऊपन, मौसम, जलवायु एवं देखभाल के अनुसार अलग-अलग होते हैं। एक फल का वजन 10 कि.ग्रा. तक हो सकता है। पपीते के फल आकार में गोल अथवा लम्बगोल (cylindrical) होते हैं।

पपीता एक ऐसा पौधा है, जो बहुत जल्दी बढ़ता है तथा इसमें फल भी बहुत आते हैं। एक अथवा डेढ साल के बीच में यह पौधा फल देना शुरू कर देता है। ये फल जनवरी से

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

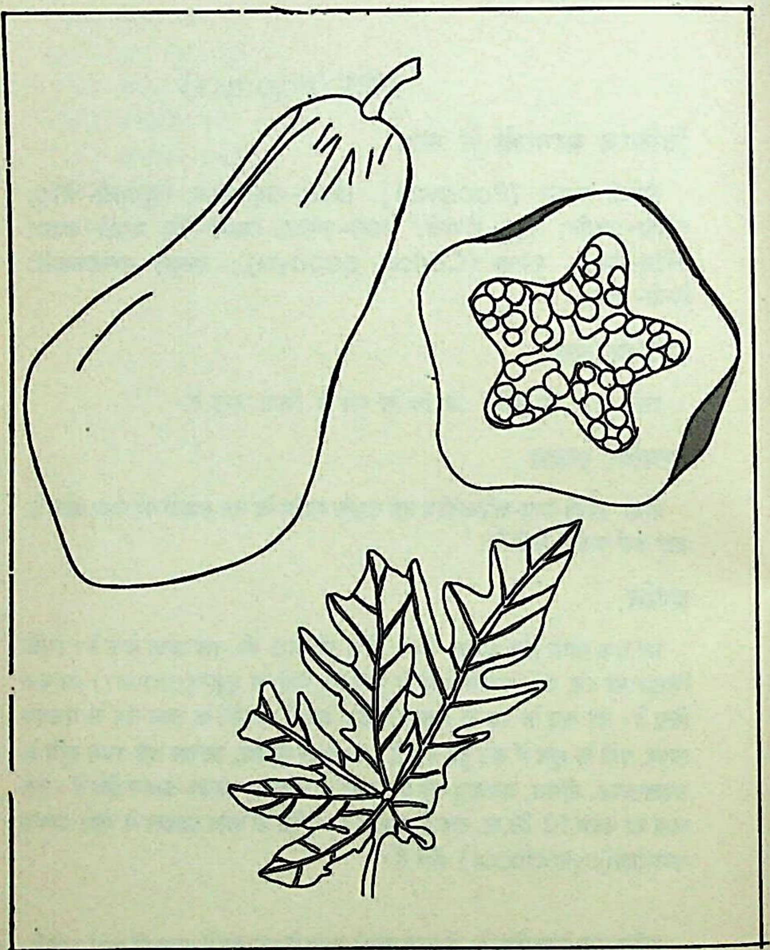

पपीता (Carica Papaya)

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

शुरु हो जाते हैं तथा लगभग चार महीने तक आते रहते हैं।

औषधीय गुण

कब्ज, बवासीर, आंतों में कीड़े एवं यकृत सम्बन्धी रोग होने पर पपीता बहुत लाभकारी है। कच्चा एवं पका,दोनों प्रकार का फल इस दृष्टि से उपयोगी है। इन रोगों के अतिरिक्त, हृदय रोग, मूत्र सम्बन्धी बीमारियों और मासिक-धर्म सम्बन्धी रोगों में भी इससे लाभ होता है।

औषधि निर्माण एवं प्रयोग विधि

पपीते का कच्चा फल सब्जी के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। पका पपीता एक फल के रूप में स्वाद से खाया जाता है। पपीते का जैम, मुरब्बा आदि बनाकर भी सुरक्षित रखा जाता है। पपीते के फलों से हल्के पेय(soft drinks) भी तैयार किये जा सकते हैं। यह बहुत पौष्टिक एवं पाचक फल है। अत: इसका नियमित रूप से प्रयोग करने पर कब्ज एवं बवासीर से बचा जा सकता है। यदि इन रोगों से पीड़ित व्यक्ति इसका नियमित सेवन करता है, तो वह इन रोगों से आसानी से छुटकारा पा सकता है। इस दृष्टि से कच्चा एवं पका— दोनों ही प्रकार का फल उपयोगी है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

बिल्व अथवा बेल (Bael Tree)

विभिन्न भाषाओं में नाम

अंग्रेजी–बेल(Bael), बेंगाल क्विन्स(Bengal quince); उड़िया–बेल, श्रीफल; उर्दू–बेल; गुजराती–बिली; तमिल–अलुविद्यम, माविलंगै, तेलुगु–बिल्वमु, मालूरमु; पंजाबी–बिल; बंगाली–बेल, बिल्व; मराठी–बेल; मलयालम–कूवलम, माविल्वु; लैटिन–ईग्ल मार्मेलस (Aegle marmelos), संस्कृत–बिल्व, श्रीफल, शैलूष, सदाफल, महाकपित्थ; सिन्धी–बील, कठोरी; हिन्दी–बेल।

प्रयोज्य अंग

बेल के फल, पत्ते, तने या डंठल, छाल एवं जड़ का प्रयोग औषधि के रूप में किया जाता है।

उत्पत्ति स्थान

बेल का पौधा हिमालय के समीप एवं उष्ण-कटिबन्धीय जंगलों में जंगली रूप में पाया जाता है। इसके पत्तों एवं फलों का प्रयोग धार्मिक उत्सवों में एवं आहार के रूप में भी किया जाता है, इसलिए बगीचों में बिल्व की खेती भी की जाती है।

वर्णन

बेल का पौधा 7 मी.—9 मी. तक ऊंचा होता है। इसके प्रत्येक पत्ते में तीन पत्रक (leaflets) पाये जाते हैं। इन पत्तों को मसलने पर एक विशेष प्रकार की सुगन्ध आती है। मई में बेल के फूल निकलते हैं तथा फल दिसम्बर में प्रारम्भ होते हैं। ये फल मार्च-अप्रैल में पकते हैं। ये आयताकार, अण्डाकार अथवा गोल होते हैं। इनके ऊपर का छिलका कठोर और मोटा होता है। बेल के कच्चे फलों का रंग हल्का हरा तथा पकने पर हल्का पीला अथवा धूसर होता है। जंगली किस्म के फल आकार में छोटे होते हैं, किन्तु खेती किये गये फलों का आकार बड़ा होता है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

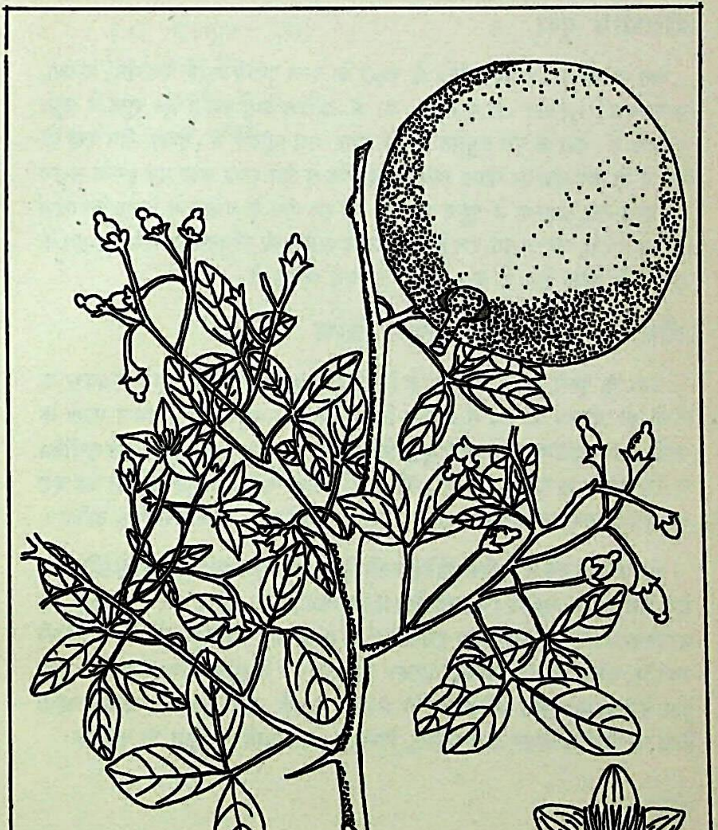

बिल्व (Aegle marmelos)

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

औषधीय गुण

बेल के कच्चे एवं पके, दोनों ही प्रकार के फल पुरानी कब्ज, बवासीर, पेचिश, अत्यम्लता (nyper acidity), पेट में अधिक वायु बनना एवं शूल में बहुत उपयोगी हैं। बेल के पत्ते मधुमेह रोग में बहुत लाभ पहुंचाते हैं। इसके तीन पत्तों को दिन में दो बार चबाकर खाना चाहिए। मधुमेह से होने वाला कष्ट एवं इसके लक्षण जब बहुत तीव्र अवस्था में पहुंच जाते हैं, तब इन पत्तों के प्रयोग से आशातीत लाभ मिलता है। हां, यह अलग बात है कि रक्त में शर्करा की उचित मात्रा होने एवं मूत्र के शर्करा से रहित होने में कुछ समय अवश्य लगता है।

औषधि निर्माण एवं प्रयोग विधि

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि बेल के कच्चे एवं पके, दोनों ही प्रकार के फलों को औषधि के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। कच्चे और कोमल फलों के पतले-पतले टुकड़े काटकर धूप में सुखा लेने चाहिए और फिर चूर्ण बना लें। यह चूर्ण दिन में तीन बार, एक चम्मच (5 ग्रा.) की मात्रा में लेना चाहिए। कब्ज होने पर यह चूर्ण गर्म दूध या गर्म पानी के साथ लें तथा दस्त होने पर यह ठण्डे जल से लेना चाहिए।

पके फल के गूदे में से बीज एवं रेशे आदि निकालकर गूदा कब्ज एवं पुरानी पेचिश के रोगी को खिलाना चाहिए। यह गूदा दिन में तीन बार 15 ग्रा. की मात्रा में दें। इस गूदे को मसलकर शरबत बनाकर तथा दूध एवं चीनी में मिलाकर प्रतिदिन पीने से भी पुरानी बवासीर, कब्ज एवं अत्यम्लता (hyper acidity) में बहुत लाभ पहुंचाता है। पका हुआ बेल का फल कुछ भारी होने से देर से हजम होता है। अतः इसमें ¼ चम्मच काली मिर्च का चूर्ण मिलाकर देना चाहिए, विशेषतः जब रोगी की भूख भी कम हो।

योग

(i) बिल्वादि चूर्ण;
(ii) बिल्वादि लेह;
(iii) बिल्वादि घृत;
(iv) बिल्वपञ्चक क्वाथ;

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

(v) विल्वमूलादि गुटिका;
(vi) विल्व तैल;
(vii) दशमूल क्वाथ;
(viii) बेल शरबत।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

मुलहठी (Liquorice)

विभिन्न भाषाओं में नाम

अंग्रेजी– लाइकरिस(Liquorice); गुजराती– जेठीमध; तमिल– अतिमधुरम्; तेलुगु– अतिमधुरमु, यष्टिमधुकम्; पंजाबी– मुलेटि; बंगाली– यष्टिमधु; मराठी– ज्येष्ठीमध; मलयालम–अतिमधुरम्; लैटिन– ग्लिसिराइजा ग्लैब्रा(Glycyrrhiza glabra); संस्कृत– यष्टीमधु, मधुंयष्टी, मधुक, क्लीतक; हिन्दी– मुलेठी, मुलहठी, जेठीमध।

प्रयोज्य अंग

मुलहठी की जड़ एवं गांठ(rhizome) औषधि के रूप में प्रयुक्त की जाती है।

उत्पत्ति स्थान

इसका पौधा शुष्क एवं सूखे जलवायु वाले स्थानों में मिलता है। इसकी खेती गर्म जलवायु वाले स्थानों तथा उष्ण-कटिबन्ध के आस-पास के इलाकों में की जाती है। मुख्यत: समशीतोष्ण जलवायु वाले स्थानों में ही इसकी खेती होती है।

वर्णन

यह एक कठोर अथवा सख्त तरह की औषधि है। इस पौधे की ऊंचाई1.8 मी. तक होती है। इस पौधे के जमीन के अन्दर के भाग में लम्बे-लम्बे डंठल(stems) से होते हैं, जिनमें अनेक शाखाएं निकली होती हैं। इसकी जड़ मोटी एवं दृढ होती है, जिसमें अनेक शाखाएं निकली होती हैं। जमीन के अन्दर की सूखी हुई, छिलके उतरी हुई और छिलके युक्त डंडियां तथा जड़ें औषधि के रूप में इस्तेमाल की जाती हैं। ज़मीन के अन्दर की इन डंड़ियों और जड़ों को कटाई के बाद छोटे-छोटे टुकड़ों में काटा जाता है और फिर छाया में सुखा लिया जाता है। इनका रंग हल्का पीला होता है। इनमें एक विशेष तरह की मिठास पाई जाती है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

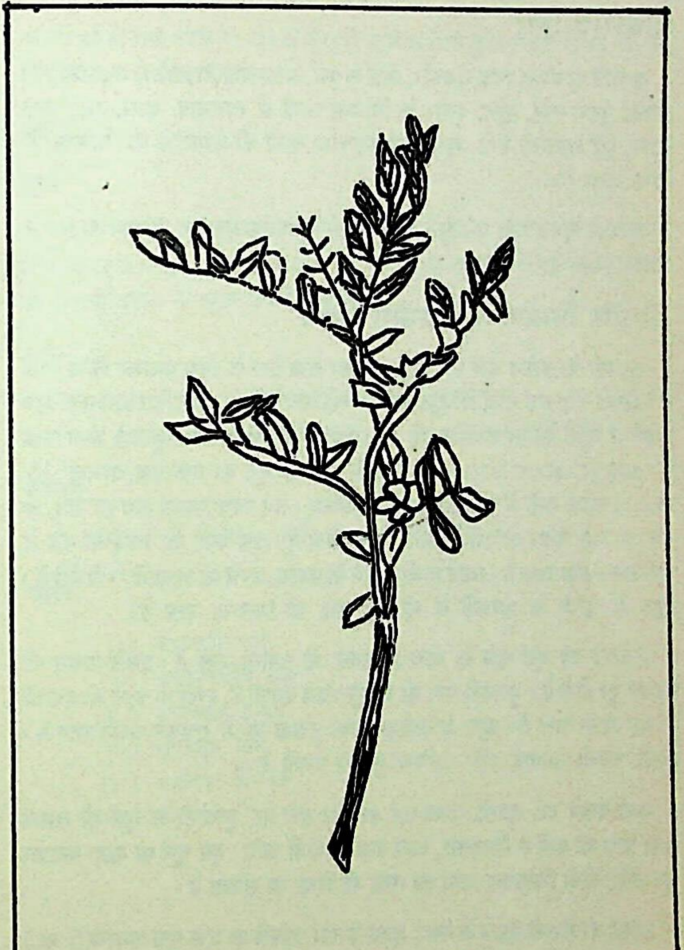

मुलहटी (Glycyrrhiza Glabra)

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

औषधीय गुण

मुलहठी का प्रयोग कब्ज, बवासीर, जोड़ों के दर्दों, अत्यम्लता(hyper acidity), अपच, पुराने ज्वर, शूल, शरीर के विभिन्न अंगों से रक्तस्राव, कास, दमा, गला बैठना, मूत्र सम्बन्धी रोगों, भूख न लगना तथा बालों की बीमारियों की चिकित्सा में किया जाता है।

जोड़ों में सूजन और दर्द होने पर मुलहठी का कल्क बनाकर, मलहम के रूप में लगाया जाता है।

औषधि निर्माण एवं प्रयोग विधि

मुलहठी का प्रयोग चूर्ण एवं काढ़ा बनाकर तथा तेल के साथ पकाकर किया जाता है। इसकी जड़ों एवं गांठों में बहुत अधिक रेशे पाये जाते हैं। इसी कारण, इसका चूर्ण बनाने में बहुत मेहनत करनी पड़ती है। इसके लिए इन्हें बार-बार कूटा व छाना जाता है। काढ़ा(decoction) बनाने के लिए, इस चूर्ण का एक बड़ा चम्मच(15 ग्रा.) दो प्याले पानी में डालकर उबालना चाहिए। जब आधा प्याला शेष रह जाए, तो इसे आग से उतार लें और छानकर चूर्ण फेंक दें। इस काढ़े को दवाई के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। स्वाद में मीठा होने के कारण, बच्चे भी आसानी से पी लेते हैं। बहुत से खांसी के शरबतों में भी इस काढ़े को मिलाया जाता है।

मुलहठी का चूर्ण पान के साथ मिलाकर भी चबाया जाता है। इससे पाचन की गड़बड़ दूर होती है। मुलहठी गले को भी मुलायम बनाती है, इसलिए बहुत सी दवाओं में यह डाली जाती है। बहुत से गायक इसका टुकड़ा मुंह में रखकर चबाते रहते हैं। इससे उनकी आवाज़ और अधिक सुरीली बनती है।

गला पकने पर, खांसी, कब्ज एवं बवासीर होने पर, मुलहठी के चूर्ण को समान मात्रा चाय की पत्ती में मिलाकर, चाय बनाकर पीनी चाहिए। इस चूर्ण का काढ़ा बनाकर दूध और चीनी मिलाकर चाय की तरह भी दिया जा सकता है।

आंखों की रोशनी बढ़ाने के लिए, मुलहठी और आंवले का एक-एक चम्मच(5 ग्रा.) चूर्ण एक गिलास जल में घोलकर रात भर पड़ा रहने दें। प्रातः कपड़े से छानकर खाली पेट में पी लें। आंखों की नज़र बढ़ाने के साथ-साथ यह कब्ज, बवासीर, अत्यम्लता एवं

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

गठिया को भी ठीक करता है। गर्मियों में लू से बचने के लिए मुलहठी का शरबत बनाकर, नियमित रूप से पीना चाहिए।

मात्रा

चूर्ण

एक चम्मच(5 ग्रा.), दिन में दो से तीन बार गर्म दूध या पानी के साथ या शहद में मिलाकर दें। आधा-आधा चम्मच शहद और घी के साथ मिलाकर लेने से आंखों की रोशनी बढ़ाने में बहुत उपयोगी है।

काढ़ा

आधा प्याला(2 औंस), दिन में दो बार। कास, दमा, कब्ज एवं बवासीर में यह काढा गर्म ही पीना चाहिए और दिन में तीन या चार बार लेना चाहिए।

शरबत

दो चम्मच (10 मि.लि.), दिन में दो या तीन बार लें।

योग

(i) यष्ट्यादि चूर्ण;
(ii) यर्ष्टीमध्वादि तैल;
(iii) यष्ट्यादि क्वाथ;
(iv) सप्तामृत लौह,
(v) ग्वादिष्ट विरेचन।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

सनाय अथवा स्वर्णपत्री (Medicinal Senna)

विभिन्न भाषाओं में नाम

अंग्रेजी– इण्डियन सेन्ना (Indian senna), मैडिसिनल सेन्ना (Medicinal senna); गुजराती– सोनामखी; तमिल– निलाविराई, तेलुगु– नेलागाना; बंगाली– सोनामुखी; मराठी– सोनामुखी; लैटिन– कैसिया आँगेस्टि-फोलिया (Cassia angustifolia); संस्कृत– स्वर्णपत्री, मार्कण्डिका; हिन्दी– सनाय।

प्रयोज्य अंग

इस पौधे के पत्ते और फल औषधि के रूप में प्रयुक्त होते हैं।

उत्पत्ति स्थान

उष्ण-कटिबन्धीय इलाकों में यह जंगली रूप में बढ़ने वाला पौधा है। व्यावसायिक दृष्टि से उपयोगी होने के कारण इसकी खेती भी की जाती है।

वर्णन

स्वर्णपत्री 60 सें.मी.— 90 सें.मी. ऊंचाई वाली छोटी-सी क्षुप (shrub) है। इसके दो-दो पत्ते (pairs) इकट्ठे लगे रहते हैं। पत्रक 1 "–2 " लम्बे तथा 0.2 "–0.6 " तक चौड़े होते हैं। पत्तों का रंग पीलापन लिये हुए हरा होता है। इसकी फलियां 1.4 "–2.8 " लम्बी एवं लगभग 0.8 " चौड़ी होती हैं। इन फलियों का रंग हरापन लिये हुए भूरा अथवा गहरा भूरा होता है। इसकी पत्तियों को छाया में, सख्त फर्श के ऊपर फैलाकर सुखाया जाता है। पूरी तरह सूख जाने पर इन्हें सूखी एवं साफ शीशियों में भर दिया जाता है।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

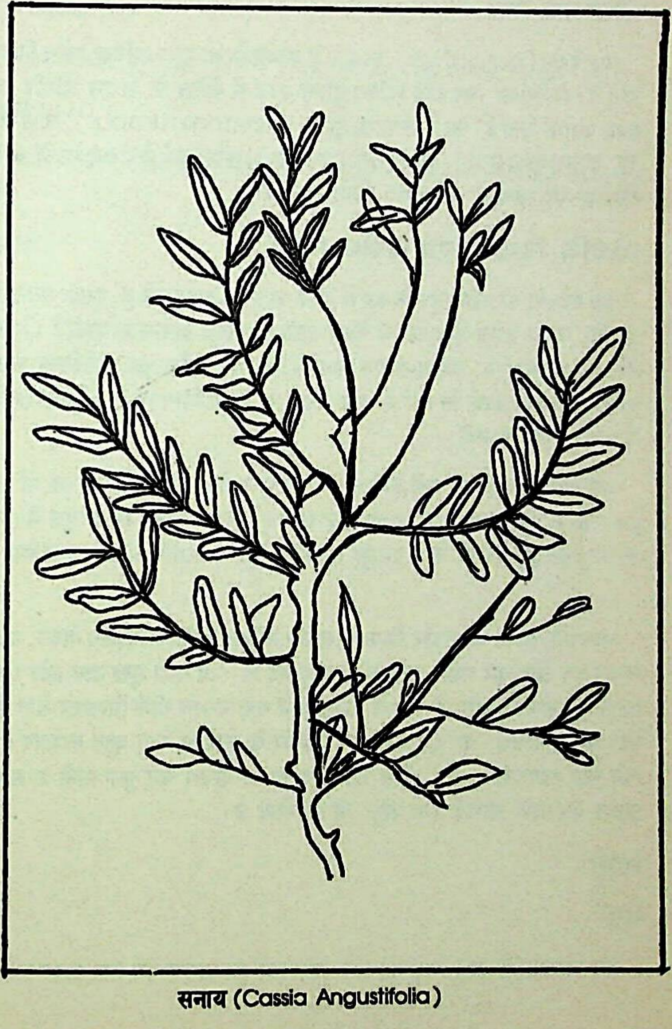

सनाय (Cassia Angustifolia)

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

औषधीय गुण

एक रेचन(purgative) के रूप में स्वर्णपत्री का बहुत अधिक प्रयोग किया जाता है। विशेषकर, जब कोई व्यक्ति पुरानी कब्ज से पीड़ित हो, तो इस औषधि का सेवन कराया जाता है। पेट में अफारा, गुल्म(phantom tumour), जोड़ों का दर्द, वातरक्त(gout), कास(bronchitis), दमा, चर्म रोग एवं पेट में कीड़े होने पर भी स्वर्णपत्री का प्रयोग किया जाता है।

औषधि निर्माण एवं प्रयोग विधि

इस औषधि का प्रयोग चूर्ण के रूप में किया जाता है। कुछ लोगों में, इसके सेवन से अरुचि, पेट में मरोड़ तथा अधिक प्यास आदि शिकायतें उत्पन्न हो जाती हैं। ऐसा होने पर इस चूर्ण में, समान-समान मात्रा में सोंठ एवं सौंफ का चूर्ण मिला लेना चाहिए। यदि स्वर्णपत्री के चूर्ण में सेंधा नमक या मिश्री मिलाकर दिया जाए, तो ये शिकायतें होती ही नहीं।

यह औषधि बच्चों को नहीं देनी चाहिए। यदि बच्चे को कब्ज है और वह मां का दूध पीता है, तो इसका चूर्ण मां को देना चाहिए। इसका प्रभाव मां के दूध में आ जाएगा। वह दूध पीने से, बच्चे पर मृदु रेचन(mild laxative) सा असर होगा।

स्वर्णपत्री, सौंफ, सोंठ और पिप्पली, सबका मिश्रित चूर्ण एक चम्मच लेकर, एक प्याला दूध और चार प्याले पानी के साथ उबाल लें। जब पानी सूख जाए और एक प्याला दूध शेष रह जाए, तो छान लें। इस दूध में एक चम्मच चीनी मिलाकर रोगी को सोते समय पिलायें। यह दूध कब्ज एवं बवासीर के रोगी के लिए बहुत लाभप्रद है। इसी तरह स्वर्णपत्री के चूर्ण, सौंफ और अदरख का काढ़ा(चार गुना पानी के साथ उबाल कर एक चौथाई शेष रहे) भी उपयोगी है।

मात्रा

चूर्ण

एक चम्मच(5 ग्रा.), रात को सोते समय गर्म दूध अथवा गर्म जल के साथ दें।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

दुग्धपाक

एक प्याला, रात को सोते समय देना चाहिए। यह गर्म ही पिलाना चाहिए।

क्वाढ़ा

गर्म काढ़ा, रात को सोते समय6 चम्मच(30 मि.लि. या एक औंस) की मात्रा में दें।

योग

(i) पञ्चसकार चूर्ण;
(ii) यष्ट्यादि चूर्ण;
(iii) सुखसारक चूर्ण।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chan

हरड़ (Chebulic Myrobalan)

विभिन्न भाषाओं में नाम

अंग्रेजी– चेबुलिक मिरोबेलन (Chebulic myrobalan); उड़िया– होरिड़; उर्दू– हैजरद; कन्नड़– हलेला; गुजराती– हरडे; तमिल– आमागोल, कान्दाकाई; तेलुगु– करक्काय, कान्दूकार; पंजाबी– हलेल, हरार, हरर; बंगाली– हरीतकी; मराठी– हरडे; मलयालम– कट्टक्क, कायस्थ; लैटिन– टर्मिनेलिया चेबुला (Terminalia chebula); सिन्धी– हर; संस्कृत– हरीतकी, अभया, कायस्था, पथ्या, पूतना, वयस्था, अमृता, चेतकी, शिवा; हिन्दी– हर्र, हरड़, हर्रे।

प्रयोज्य अंग

हरड़ का फल औषधि में प्रयुक्त होता है।

उत्पत्ति स्थान

हरड़ उष्ण-कटिबन्ध एवं उसके समीप के स्थानों के जंगलों में, 1500 मी. की ऊंचाई तक पाई जाती हैं।

वर्णन

हरड़ एक वृक्ष के रूप में बढ़ने वाली औषधि है। इस वृक्ष की ऊंचाई 24 मी.—30 मी. होती है। इसका तना सख्त तथा दृढ़ होता है। हरड़ के पत्तों की लम्बाई 7.5 सें.मी.—20 सें.मी. तथा चौड़ाई 5 सें.मी.—10 सें.मी. होती है। इन पत्तों पर उभरी हुई रेखाएं होती हैं। हरड़ के फल की लम्बाई 2.5 सें.मी.—3 सें.मी. होती है। इस फल के ऊपर, बाहर की ओर पांच रेखायें अंकित होती हैं। इन कच्चे फलों का रंग हरा होता है, परन्तु पकने पर ये पीले से हो जाते हैं। जब ये फल सूख जाते हैं, तो इनका रंग भूरापन लिये पीला और गहरा भूरा हो जाता है। ये फल जनवरी से अप्रैल में पकते हैं।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

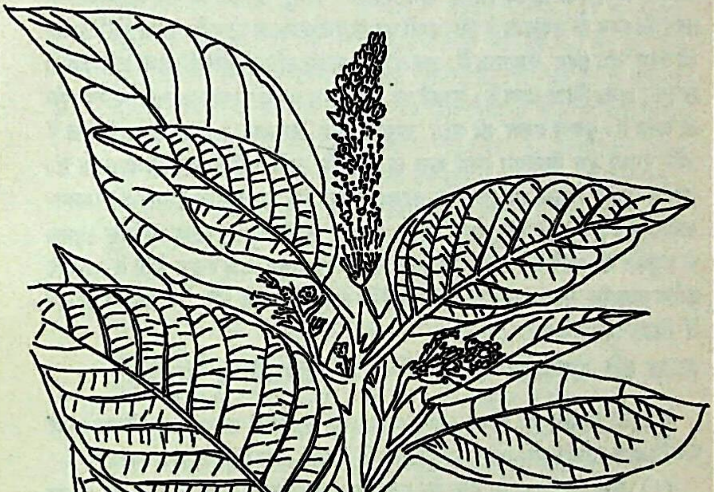

हरड़ (Terminalia Chebula)

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

 Digitized by Agamnigam Foundation, Chan

हरड़ का रंग, आकार, गूदा, माप तथा पकने का समय अलग-अलग होता है। इस आधार पर इसकी अनेक किस्में मानी गई हैं। परन्तु, औषधि के रूप में, केवल दो तरह की हरड़ ही उपलब्ध है और इन्हीं का ही प्रयोग किया जाता है। इनमें छोटी प्रकार की हरड़ 'जंघ हरड़' कहलाती है। जब ये फल कच्चे और हरे होते हैं, तभी इन्हें पेड़ों से तोड़कर सुखा लिया जाता है। सूखने पर इनका रंग काला अथवा कालापन लिये भूरा हो जाता है। दूसरी प्रकार की हरड़ 'काबुली हरड़' कहलाती है। जब ये पक जाती हैं और इनका रंग पीलापन लिये भूरा हो जाता है, तभी इन्हें इकट्ठा किया जाता है। अलग-अलग स्थानों पर उगने के कारण, इनका रंग, आकार तथा भार भी अलग-अलग होता है। इनमें 'जंघ हरड़' अधिक रेचक होती है तथा पेट साफ करने के उद्देश्य से प्रयुक्त की जाती है, जबकि 'काबुली हरड़' अपेक्षाकृत कम रेचक होती है। इसका प्रयोग बवासीर, कास एवं दमा आदि रोगों के इलाज के लिए और एक टॉनिक के रूप में किया जाता है।

हरड़ की उत्पत्ति के सम्बन्ध में पौराणिक गाथाएं

हरड़ की उत्पत्ति को लेकर अनेक प्रकार की पौराणिक गाथाएं आयुर्वेदिक ग्रन्थों एवं तिब्बतीय चिकित्सा-शास्त्र में प्रचलित हैं। इनमें कुछ प्रमुख निम्न प्रकार हैं: —

(i) एक बार विष्णु के मुख से(एक अन्य मतानुसार, ब्रह्मा के मुख से) अमृत की सात बूंदें पृथ्वी पर गिर पड़ीं। इससे सात प्रकार की हरड़ की उत्पत्ति हुई।

(ii) इन्द्र के मुख से अमृत का कुछ अंश भूमि पर गिर पड़ा, इससे हरड़ का जन्म हुआ।

(iii) तिब्बतीय चिकित्सा-शास्त्र में इन कथाओं को कुछ अधिक विसतार में बताया गया है। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य कथाओं का भी उल्लेख है। उनमें कुछ निम्न प्रकार हैं: —

हेल रेंग' नामक ग्रन्थ में जुर खर धर्म स्वामी ने लिखा है कि बनारस के पूर्व की ओर गन्धमार्दन नामक एक पर्वत है। एक बार उस पर्वत पर पृथ्वी का देवता लग-प-हन-पो तथा जल देवी संग-चेन रति क्रिया में व्यस्त थे। एक दूसरे का आलिंगन करते समय उनका रज व वीर्य पृथ्वी पर गिरा और आपस में मिल गया। इसके परिणामस्वरूप, हरड़ का जंगल उत्पन्न हो गया।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

(iv) एक वार स्वर्ग की देवी, मतिसंकरी ने नीले रंग के विजया के गुच्छे इकट्ठे किये। ये गुच्छे घोड़े के सिर के आकार के समान दिखाई दे रहे थे। उसने चिकित्सा की देवी और सिद्धदेवी, जिसका नाम मनोहरी देवी था, को यह गुच्छा भेंट किया और नम्रता से कहा, "मनोहारी देवी, यह गुंच्छा विजया नामक औषधि का है। यह औषधि सब औषधियों में से श्रेष्ठ है। इसमें सभी प्रकार के गुण हैं तथा इसका आकार भी सुन्दर है। तुम्हारा मेरे साथ वहुत स्नेह है, इसलिए इसे मैं तुझे भेंट कर रही हूं। तुम इसे स्वीकार करो, जिससे भविष्य में अच्छे पुरुषों के वंश का कल्याण हो। दया करके, इस पूजा के पौधे को वो दो। इसके फल वहुत ही गुण वाले व लाभदायक होंगे।"

मनोहारी देवी ने हरीतकी के इस गुच्छे को ले लिया। तब वज्रासन में वैठकर उसने दसों दिशाओं के जिन परशर के प्रति आह्वान, स्तुति और पूजा कर्म किये। उसने गुरु एवं त्रिरत्नों से दया की प्रार्थना की और कहा "मुझे पवित्रता की शक्ति, जो हेतु और फल की कामना से रहित है, से प्रेरणा प्राप्त हुई है। उस सत्य की शक्ति के द्वारा की गई प्रार्थना के सन्दर्भ में सिद्धि प्राप्त हो।" इसके फलस्वरूप, हरड़ का जंगल सत्ता में आया।

औषधीय गुण

हरड़ का प्रयोग कब्ज, ववासीर, दमा, कास(bronchitis), गले की गिल्टियों में सूजन(tonsillitis), स्वरयन्त्र का शोथ(laryngitis), ग्रसनीकोप(pharyngitis), उच्च रक्तचाप और हृदय रोग आदि की चिकित्सा में किया जाता है। इन रोगों के अतिरिक्त सूजन, अतिसार, पेचिश, नेत्र रोगों और चर्म रोगों में भी हरड़ वहुत उपयोगी है।

औषधि निर्माण एवं प्रयोग विधि

कब्ज एवं ववासीर की चिकित्सा के लिए प्रायः छोटी प्रकार की हरड़, जिसे 'जंघ हरड़' के नाम से जाना जाता है, का प्रयोग किया जाता है। हरड़ के प्रयोग से आंत की दीवारों पर शुष्क प्रभाव पड़ने की आशंका रहती है। इस कुप्रभाव से वचने के लिए, हरड़ के फलों को साफ़ करके थोड़े से घी अथवा मक्खन में भून लेना चाहिए। उसके पश्चात् इनका चूर्ण बनाना

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

चाहिए। इस चूर्ण में 10% सेंधा नमक मिलाकर रोगी को रात को सोते समय एक से दो चम्मच(5 ग्रा.—10 ग्रा.) की मात्रा में गर्म पानी के साथ देना चाहिए। जिन रोगियों का पेट अच्छी तरह साफ नहीं होता, उन रोगियों के पेट में इस चूर्ण को लेने से मरोड़ आदि की शिकायत हो सकती है। अत: इस प्रकार के रोगियों को इस चूर्ण में चौथाई-चौथाई भाग सौंफ और सोंठ का चूर्ण मिलाकर देना चाहिए।

पुरानी कब्ज और टॉन्सिल्स(tonsillitis) के रोगी को हरड़ के चूर्ण में चौथाई भाग सेंधा नमक मिलाकर रात को सोते समय खिलाना चाहिए। हरड़ के चूर्ण को प्राय: समान-समान मात्रा आंवले और बहेड़े के चूर्ण में मिलाकर सेवन कराया जाता है। यह चूर्ण 'त्रिफला' कहलाता है। इसे रात को सोते समय एक या दो चम्मच(5 ग्रा.—10 ग्रा.) की मात्रा में गर्म जल अथवा गर्म दूध के साथ देना चाहिए। त्रिफला के प्रयोग की सर्वोत्तम विधि यह है कि इस चूर्ण का एक चम्मच, रात को एक गिलास पानी में भिगोकर रख दें। प्रात: काल इसे साफ कपड़े से छानकर, खाली पेट में पी लें। स्वाद में कुछ कसैला होने के कारण, इसमें शहद, चीनी अथवा गुड़ मिलाया जा सकता है।

यदि कास, दमा एवं खांसी के रोगी को कब्ज और यकृत् विकार भी हों, तो उसे त्रिफला का काढ़ा बनाकर पिलाना चाहिए। काढ़ा बनाने के लिए, दो चम्मच(10 ग्रा.) त्रिफला के चूर्ण को दो प्याले(4 औंस) पानी के साथ उबालें। जब आधा प्याला शेष रह जाए, तो उतार कर छान लें। यदि इससे रोगी का पेट भी अच्छी तरह साफ करना अभीष्ट हो तो यह गर्म ही पिलाना चाहिए, अन्यथा ठण्डा होने पर पिलायें।

हरड़ का अवलेह (linctus) बनाकर भी प्रयोग में लाया जाता है। इसका एक बहुत लोकप्रिय अवलेह अगस्त्य हरीतकी' अथवा 'अगस्त्य रसायन' के नाम से प्रचलित है। यह अवलेह रोगी को प्रात: और सांय, दिन में दो बार शहद अथवा गर्म दूध के साथ देना चाहिए।

हरड़ के मोदक(बड़े आकार की गोलियां) भी खांसी और दमा के रोगी के लिए बहुत उपयोगी हैं। इनका प्रयोग करने से व्यक्ति खांसी और दमा

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

जैसे रोगों से बचा रहता है। मोदक बनाने के लिए, हरड़ के चूर्ण में चीनी की चाशनी मिलाई जाती है। इसके अतिरिक्त सोंठ, पिप्पली, काली मिर्च, दालचीनी, लौंग और जायफल का चूर्ण भी इसमें मिलाया जाता है। इस मिश्रण को इसी रूप में भी प्रयुक्त किया जा सकता है तथा मोदक बनाकर भी।

हरड से एक अन्य मादक(alcoholic) औषधि भी तैयार की जाती है, जो 'अभयारिष्ट' के नाम से प्रसिद्ध है। इसे तैयार करने के लिए, कुछ अन्य औषधियों के साथ हरड़ को एक सीलबन्द घड़े में आसवन (fermentation) के लिए रखा जाता है। इसके प्रयोग से खांसी और दमा के साथ-साथ बवासीर में भी बहुत लाभ मिलता है।

हरड़ का प्रयोग एक टॉनिक(tonic) के रूप में भी किया जाता है, जिससे मनुष्य का स्वास्थ्य अच्छा बना रहता है तथा वह विभिन्न रोगों के आक्रमण से भी बचा रहता है। इस उद्देश्य के लिए, हरड़ का बीज निकालकर इसके गूदे का चूर्ण बनाकर प्रयोग में लाया जाता है। विभिन्न ऋतुओं में अलग-अलग अनुपानों के साथ इसके प्रयोग का विधान किया गया है, जो निम्न प्रकार है: —

वर्षा ऋतु में	सेंधा नमक के साथ;
शरद् ऋतु में	चनी के साथ;
हेमन्त ऋतु में	सोंठ के चूर्ण के साथ;
शिशिर ऋतु में	पिप्पली के चूर्ण के साथ;
वसन्त ऋतु में	शहद के साथ, तथा
ग्रीष्म ऋतु में	गुड के साथ।

प्राय: इस चूर्ण का एक चम्मच(5 ग्रा.), एक चम्मच(5 ग्रा.) अनुपान के साथ दिया जाता है। वैसे व्यक्ति की प्रकृति के अनुसार इसकी मात्रा न्यूनाधिक की जा सकती है। रोगी को प्रतिदिन ही इस औषधि का सेवन करना चाहिए। प्रारम्भ में, इसके सेवन से पतले दस्त आ सकते हैं। परन्तु धीरे-धीरे, मनुष्य इसका अभ्यस्त हो जाता है और तब केवल उसे एक बार ही पुरीष त्याग के लिए जाना होता है। इससे उसका पेट भी अच्छी तरह साफ हो जाता है तथा उसे किसी प्रकार का कष्ट भी नहीं होता।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

मात्रा

चूर्ण

आधा से एक चम्मच (2.5 ग्रा.—5 ग्रा.), दिन में दो वार गर्म जल के साथ दें।

क्वाढ़ा

6 चम्मच (30 मि.लि. या एक औंस), दिन में दो वार खाली पेट में दें।

अवलेह

एक से दो चम्मच (5–10 ग्रा.) दिन में दो या तीन बार गर्म दूध अथवा शहद के साथ दें।

मोदक

5 ग्रा. दिन में दो वार गर्म जल या गर्म दूध के साथ दें।

अभयारिष्ट

6 चम्मच (30 मि.लि. या एक औंस), दिन में दो बार भोजन के वाद, समान मात्रा में जल मिलाकर देना चाहिए।

योग

(i) पथ्यादि चूर्ण;
(ii) अभया मोदक;
(iii) अभयारिष्ट;
(iv) व्याघ्री हरीतकी;
(v) चित्रक हरीतकी;
(vi) अगस्त्य हरीतकी अथवा अगस्त्य रसायन;
(vii) पथ्यादि क्वाथ।

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida

जड़ी-बूटी चिकित्सा

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh

डॉ. भगवान दाश आयुर्वेद के एक लब्ध-प्रतिष्ठित चिकित्सक हैं। देश में आयुर्वेद एवं देशीय चिकित्सा-पद्धति के प्रचार एवं प्रसार में उनका विशिष्ट योगदान रहा है। एक चिकि[illegible] के रूप में भी सफल एवं ख्याति-प्राप्त हैं। इसके साथ [illegible] डॉ. दाश ने तिब्बतीय-औषधि के क्षेत्र में डॉक्टरेट [illegible] प्राप्त की है। अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त वे संस्कृत [illegible] मंगोलियन एवं तिब्बती भाषाओं के भी विद्वान हैं विश्व [illegible] संगठन (WHO) के कार्य के सम्बन्ध में वे [illegible], बांग्लादेश, मंगोलिया एंव आस्ट्रेलिया देशों की या[illegible] हैं। इस समय तक वे आयुर्वेद-विषयक बीस से [illegible] अधिक पुस्तकों का लेखन कार्य सम्पन्न कर चुके हैं।

जड़ी-बूटी चिकित्सा

1. सन्धिवात एवं गठिया
2. दमा एवं खाँसी
3. मधुमेह
4. पैप्टिक अल्सर एवं आमाशय शोथ
5. कब्ज एवं बवासीर
6. पीलिया एवं यकृत-विकार
7. उच्च रक्त-चाप एवं अनिद्रा
8. हृदय रोग

Adv. Vidit Chauhan Collection, Noida